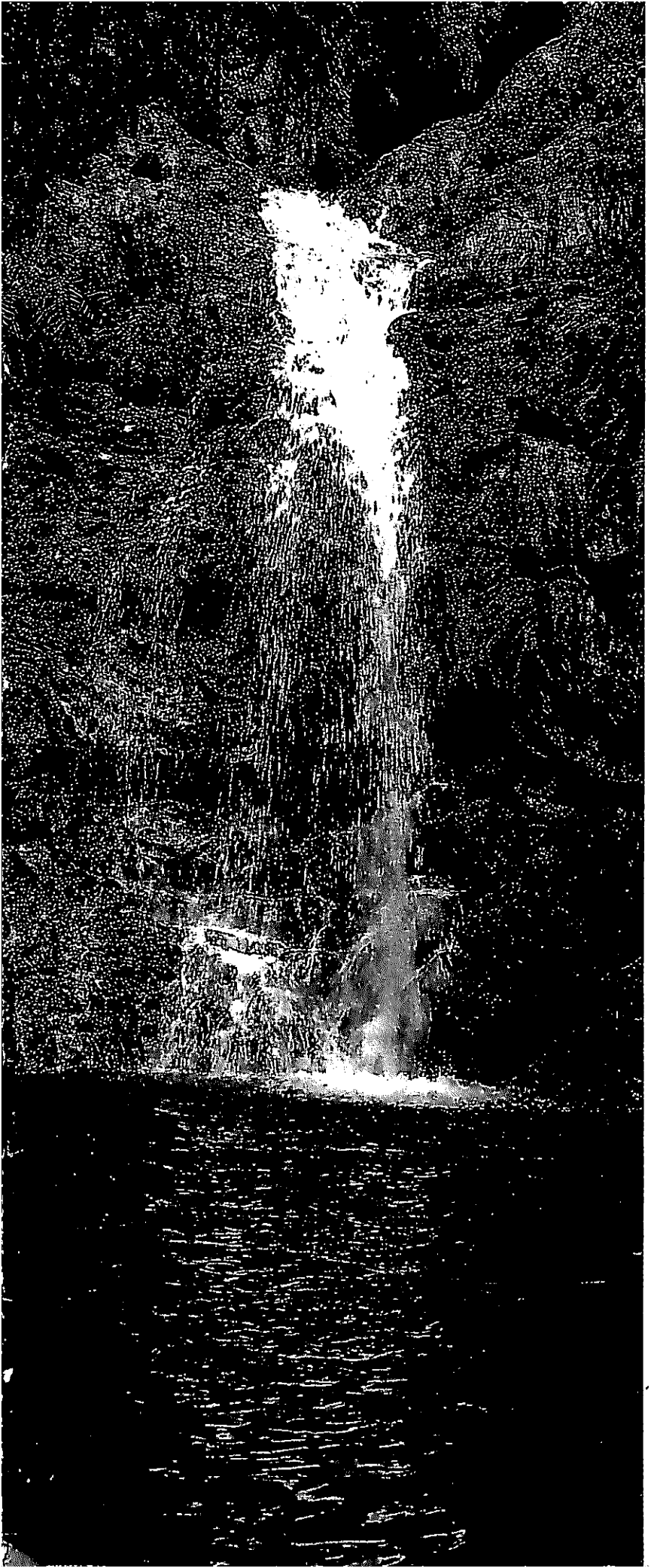

जलागम विकास के आयाम

□

तरुण भारत संघ का सचित्र अनुभव एवं
पावडी की दिशा

तरुण भारत संघ
भीकमपुरा - थानागाजी - अलवर

जलागम विकास के आयाम
तरुण भारत संघ का सचित्र अनुभव एवं
पावडी की दिशा

□

तरुण भारत संघ,
भीकमपुरा, थानागाजी,
अलवर

□

मुद्रक : कुमार एण्ड कम्पनी, जयपुर

जलागम विकास के आयाम

किसानों एवं पशुपालकों के लिए जल व आगोर दोनों ही जीवन के आधार हैं। इनको पहुँचाई गयी कोई भी क्षति किसान व पशुपालक दोनों के जीवन को सीधा प्रभावित करती है। इससे ये बेकारी व गरीबी के दलदल में फंस जाते हैं। इसे ये भली प्रकार जानते हैं कि इसका विकास कैसे और क्यों करना है। वे यह भी जानते हैं कि इस काम के लिए किसी बड़ी तकनीक की जरूरत नहीं है।

जलागम क्षेत्रों के क्षत-विक्षत होने का मुख्य कारण आज की विकास-तृष्णा रही है जिसने पहले तो जंगल कटवाये फिर खेती व पशुपालन को बाजार व अर्थ केन्द्रित बनाया। बाजारू व्यवस्था पर खड़ी यह व्यवस्था अब अधिक उत्पादन के नाम पर प्रकृति के संसाधनों का शोषण कर रही है, जिससे लोगों का ध्यान अपने' शामिलाती प्राकृतिक संसाधनों की देख-रेख व साझा प्रबन्ध से हट गया है।

मशीनीकरण ने धरती को नंगा करने में बहुत बड़ी भूमिका निभायी है। इधर आज की शिक्षा ने साझी जीवन पद्धति को समाप्त कर दिया है जबकि जलागम विकास का काम तो साझा काम ही है। इसलिए इस साझे काम को करने के लिए साझी सहमति की जरूरत रहती है। सहमति भी कोई बाहर से आकर बनाये तो यह स्थायी नहीं होगी। स्वयं लाभग्राही समूह को इस मामले में पहल करने योग्य बनाना पड़ेगा। उनकी तरफ से यदि कोई दूसरी संस्था या सरकार पहल करेगी तो भी जलागम विकास का काम स्थायी और फलदायी नहीं होगा, यह मान लेना चाहिए।

जलागम क्षेत्रों को विकास हेतु तैयार करने से पहले यह देखना भी जरूरी है कि इस काम की ओर लोगों को प्रवृत्त करने के लिए प्रवेश बिन्दु क्या हो सकता है? जो व्यक्ति इस काम के लिए समाज के बीच जा रहा है उसका अपना मानस स्पष्ट है या नहीं यह भी देखना होगा। फिर उसे समाज किस दृष्टि से देखेगा? समाज के मन में क्या-क्या सवाल उठेंगे? ये इस काम को क्यों करना चाहते हैं? इनका कुछ निजी स्वार्थ तो नहीं है इसमें, आदि सवालों पर जलागम विकास के काम के लिए समाज में जाने से पूर्व गंभीरता से विचार कर अपने में स्पष्ट होना जरूरी है। समाज इस मामले में सीधी पूछताछ भी कर सकता है। यदि वह पूछे नहीं तो भी हमें अपनी तरफ से अपने मंतव्य को बता देना होगा। फिर मानस को स्पष्ट करने का काम एक बार ही नहीं, निरन्तर करना पड़ेगा। इसके बावजूद भी समाज के मन में बहुत सी शंकाएँ रह सकती हैं। उनकी शंकाओं से हमें क्रोधित नहीं होना है और न उतावलापन दिखाना है। धीरज से जितना हो सके अपनी तरफ से स्पष्ट जवाब देते रहना होगा। यह हमारा कर्त्तव्य और धर्म दोनों है। इसे पूरा निभाये बिना समुदाय के जलागम विकास के बारे में विचार करना न्यायसंगत नहीं होगा। यह जलागम विकास का प्रवेश-चरण (Entry-phase) कार्यक्रम है। यह अच्छी तरह सफल हो

गया तो हमें समझना चाहिए कि आगे का काम भी आसान हो जायेगा। यह तो प्रारंभिक प्रक्रिया मात्र है। इस विषय में परियोजना से पहले ही सोच-विचार कर लेना जरूरी है। यह एक अलग बात है कि यही काम यदि सरकारी स्तर पर हो तो ऐसा नहीं होता। वहां सदा संवेदनशील सवालों से बचकर निकलने का रास्ता खोजा जाता है। इसलिए समाज पर न तो इसका प्रभाव पड़ता है और न ही समाज इस काम में भागीदार बनता है।

सरकार की मदद से जलागम विकास की परियोजना चलाने की जब बात सामने आती है, तो सबसे पहले डी.आर.डी.ए. कार्यालय के चक्कर खाने का काम शुरू होता है। यहाँ से पी.आई.ए. बनने हेतु बहुत-सी औपचारिकताएँ पूरी करना, उनसे फंड प्राप्त करने हेतु इन्डेन्ट देना, वाटरशेड विकास टीम बनाना, फिर टीम द्वारा गाँव की पहचान करना, जहाँ जलागम परियोजना चलानी है, उस टीम का प्रशिक्षण ओरिएन्टेशन प्रवेश-चरण की ग्रेडिंग, कार्य योजना के निर्माण के बाद समुदाय की भागीदारी की बात आती है। समुदाय से इस काम की प्रक्रिया सीखने तथा स्थानीय समाज से ही कार्यकर्ता खोजने की सम्भावनाएँ सरकारी जलागम विकास कार्यक्रम में बहुत कम हो पाती हैं। क्योंकि जलागम विकास टीम के लिए जो शैक्षिक योग्यता तय है, उसके अनुरूप कार्यकर्ता मिलना सम्भव नहीं है। सरकार की जलागम विकास परियोजना चलाने से पहले ही काम करने वाले कार्यकर्ता को अपने मानस का एक निश्चित तकनीकीकरण करना होता है। इससे लोगों में अपनी संवेदनाएँ एवं सहजता व सरलता से काम करने की सम्भावनाएँ शेष नहीं बचती हैं। यह इसलिए क्योंकि इसमें केवल प्रक्रिया का दस्तावेजीकरण 'Documentation of process', 'भौतिक कार्यों की प्रगति 'Physical progress' और आर्थिक प्रगति 'Financial progress' पर विशेष ध्यान दिया जाता है। ये सब बातें तो सरकारी परियोजना को शुरू करने से पहले ही ध्यान में रखनी पड़ती हैं। सरकार को यह बताना पड़ता है कि हमारी काम की प्रक्रिया ऐसी रहेगी तभी वे पी.आई.ए. बनाते हैं। पी.आई.ए. बनाने के बाद तैयारी का चरण शुरू होता है। इसे सरकारी बोलचाल की भाषा में तैयारी-चरण (Preparatory phase) कहते हैं। इसमें सबसे पहले वाटरशेड विकास टीम के सदस्यों के लिए तैयारी-चरण की कार्य योजना बनाने हेतु उन्मुखीकरण का काम होता है। इसके बाद वाटरशेड टीम तैयारी-चरण की कार्य योजना तैयार करती है।

टीम के सदस्यों के पास लोगों को अपनी परम्परागत विधियों तथा ज्ञान के विषय में संवेदनशील बनाने तथा लोगों की भूमिका के विषय में लोगों के विचार जानने के अवसर नहीं हैं, बल्कि बाहर के लोगों की जो टीम है वही विचार करेगी। इस प्रकार समुदाय की भागीदारी के नाम पर केवल टीम ही विचार करती है। उसे किस प्रकार से भागीदारी करनी है, इसका निर्णय समुदाय द्वारा किये जाने की संभावनाएँ बहुत कम रहती हैं।

टीम के सदस्यों तथा सामाजिक कार्यकर्ता को समुदाय का नेतृत्व करने तथा जलागम विकास की प्रक्रिया चालू करने हेतु वाटरशेड का सर्वेक्षण तथा विश्लेषण एवं वाटरशेड का प्रबन्ध करने का प्रशिक्षण दिया जाता है। इसमें लोगों को केवल टीम के कहे-अनुसार काम करना पड़ता है। लोगों को अपनी जरूरत के अनुसार कुछ भी काम करने की स्वतंत्रता नहीं है।

जलागम क्षेत्रों का सीमांकन लोगों के साथ मिलकर किया जाना चाहिए। साथ में समुदाय के साथ बैठकर जलागम क्षेत्र को समझने और किस तरह अच्छा बनाने हेतु क्या-क्या गतिविधियाँ शुरू की जायें, इस पर विचार होना चाहिए। इससे समुदाय में अपने जलागम क्षेत्र के विषय में समझ व चेतना विकसित होती है। समुदाय स्वयं इस काम को करने की हिम्मत अर्जित करता है। जब लोगों को यह पता चलेगा कि इससे वनस्पति व घास-फूस बढ़ेगा जिससे पशुओं को भरपेट चारा मिलेगा तो दूध बढ़ेगा एवं फसलों

की पैदावार बढ़ेगी तो समुदाय के लोग स्वयं जलागम विकास के कार्य करने लगेंगे। बातचीत में यह सब साफ तौर से बताया जाना चाहिए कि जलागम क्षेत्रों के विकास का लाभ समानता के आधार पर सबको मिलेगा। लोगों को यह भी बताना होगा कि भूमिहीनों को भी इससे लाभ मिलेगा। जब समाज के हर वर्ग को– पशुपालक, भूमिहीन, दुकानदार सबको जलागम विकास के कार्यों में बराबर का लाभ एवं हिस्सेदारी मिलने की संभावनाएँ साफ और निश्चित हो जाती हैं तो लगभग 60% समुदाय इस तरह के काम में जुड़ने के लिए तैयार हो जाता है। धीरे-धीरे जब काम की प्रक्रिया आगे बढ़ती है, तो फिर 70 और 80% तक समाज की भागीदारी इस कार्य में प्रत्यक्ष होने लगती है। जब 80% जन की भागीदारी होने लगे तब टीम के कार्यकर्ताओं को समुदाय के साथ दूसरे स्थानों पर हो रहे जलागम क्षेत्रों के विकास कार्य को जाकर देखना व समझना चाहिए। साथ-साथ अपने जलागम क्षेत्र का निर्धारण करके लोगों के साथ काम के बंटवारे की बात शुरू करनी चाहिए। यह बातचीत जलागम क्षेत्र के संसाधनों की समझ के बाद ही सम्भव है।

संसाधनों की समझ के बाद ही गांव स्तर का संगठन जिसे ग्राम सभा/लोक समिति/कार्य समिति/गाँव के संगठन, उपयोगकर्ता समूह या 'यूजर ग्रुप' बनाने का काम शुरू करना चाहिए। यह उपयोगकर्ता समूह ही अपने जलागम क्षेत्र की मिट्टी, पानी, घास, फसल तथा पशुपालन से सम्बन्धित जो भी समस्याएँ हैं उन्हें अच्छी प्रकार समझता है। इसी के साथ जलागम क्षेत्र के विकास हेतु किस तरह की प्रवृत्तियाँ, विधियाँ व तरीके काम में लिये जायेंगे, ये भी उपयोगकर्ता समूह के साथ ही तय किये जाने चाहिए। जलागम क्षेत्रों की जो समस्याएँ हैं, उनका प्राथमिकता के आधार पर समाधान लोगों के साथ बैठकर ही ढूँढना चाहिए। जलागम क्षेत्र के भू-ढाल का सर्वेक्षण करते समय भी समुदाय को साथ रखना जरूरी होना चाहिए, जिससे समुदाय को सर्वेक्षण की जानकारी रहे। साथ ही आधारभूत सर्वेक्षण भी तैयार कर लेना चाहिए। इसके बाद ही उपयोगकर्ता समूह के नाम पर बैंक में एक खाता खुलवा देना चाहिए। यदि इस पूरी प्रक्रिया में समुदाय भागीदार रहता है तो जलागम क्षेत्र के विकास कार्यों में रुकावट नहीं आती और काम तेजी से आगे बढ़ सकता है।

समुदाय की नयी जलागम क्षेत्र में काम करने वाली टीम को अपनी समझ व विश्वास बनाने के बाद ही जलागम क्षेत्र के विकास की योजना बनानी चाहिए। यह जलागम क्षेत्र के विकास का तीसरा चरण है, लेकिन बहुत महत्त्वपूर्ण है।

योजना निर्माण में समाज की भागीदारी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। योजना निर्माण में समुदाय की भागीदारी के लिए उसका 'उन्मुखीकरण' (Orientation) अत्यन्त आवश्यक है। यह उन्मुखीकरण का कार्य जलागम विकास टीम तथा समुदाय दोनों के लिए जरूरी है। ये दोनों मिलकर ही कार्य योजना तैयार करेंगे। यदि योजना निर्माण के लिए समुदाय की ठीक से तैयारी हो जाती है तो समुदाय अपने काम का दस्तावेजीकरण 'Documentation of Process'. भौतिक कार्यों का रिकार्ड, आर्थिक कार्यों का रिकार्ड तथा भौतिक व आर्थिक कार्यों की प्रगति की जानकारी करने लगता है, तभी उपयोगकर्ता समूह अपने काम के प्रस्ताव तैयार करना शुरू कर देता है। उसी के आधार पर कामों की छंटनी व निर्धारण करके प्रस्ताव का बजट एस्टीमेट बनाना चाहिए। यह एस्टीमेट, यदि समुदाय के लोग ही मंजूर कराने के लिए पावडी कार्यालय या डी.आर.डी.ए. में पी.आई.ए. परिचालन संस्था के प्रतिनिधि के रूप में जायें तो अच्छा है। तभी लोगों की पूर्व तैयारी मानी जायेगी।

उक्त प्रक्रिया से कार्यों का सम्पादन बाहर के लोगों के लिए आसान नहीं है। यदि यही काम स्थानीय समुदाय का कोई व्यक्ति करता है, तो भी आसान तो नहीं है। लेकिन इसका परिणाम स्थायी व फलदायी

होता है। समुदाय बाहर के लोगों के सामने अपनी बात कहकर बदल सकता है, लेकिन उसी समाज के व्यक्ति के सामने समुदाय आसानी से अपना निर्णय नहीं बदल सकता। जलागम क्षेत्रों के विकास की तैयारी, योजना निर्माण एवं योजना को चलाने की स्वीकृति प्राप्त करने का काम यदि समुदाय सहजता व सरलता से पूरा कर लेता है, तो जलागम क्षेत्रों के विकास संबंधी भौतिक काम करने में कोई कठिनाई शेष नहीं बचती। लेकिन आज की व्यवस्था में उक्त प्रक्रिया को चलाना बहुत भारी-भरकम काम है। इसीलिए लिखा-पढ़ी के भारी-भरकम काम से समुदाय बहुत डरता है। उसे हताशा भी होती है। उसके जलागम क्षेत्रों के सरकारी तौर-तरीकों में शामिल नहीं होने का कारण भी यही है।

तरुण भारत संघ ने पिछले वर्षों में लोगों के अपने तौर-तरीकों के मुताबिक काम किया है। इस सारे काम में उसने लोगों की पहल व उनकी इच्छाशक्ति समझकर जो काम किये उनकी तैयारी, आयोजन, संचालन, काम की देख-रेख, सभी कुछ समुदाय ने अपने आप किया। जिन कामों में संस्था ने अपना निर्णय चलाया या काम की तैयारी व आयोजन में लोगों की कम भागीदारी हुई या संस्था ने लोगों को अनदेखा किया, वहीं पर समुदाय ने किसी भी स्तर पर जलागम क्षेत्र के विकास कार्यों में उत्साह नहीं दिखाया। जहाँ लोगों की बिना इच्छा के संघ ने काम किया वहाँ भी काम के परिणाम अच्छे नहीं रहे और जहाँ लोगों की चाहत के बावजूद समय पर काम शुरू नहीं हुआ, वहाँ के परिणाम भी उत्साहवर्धक नहीं रहे। समुदाय में जब भी जलागम क्षेत्रों के विकास की चाहत पैदा हो तब ही उस काम के मोटे-मोटे लाभ और हानि देखकर तुरन्त काम चालू कर देना चाहिए। इसके परिणाम अच्छे रहते हैं। संघ अपने इस प्रकार के अनुभवों को जलागम क्षेत्रों के अनुभव के रूप में यहाँ प्रस्तुत कर रहा है।

जलागम क्षेत्रों के विकास का काम लोग कैसे करें?

यह काम करने के लिये सबसे पहले सूक्ष्म जलागम क्षेत्र का सीमांकन कर लेना चाहिए। यह काम एक निर्धारित दिशा की तरफ भूमि के ढलान को देखकर किया जाता है। इसके सीमांकन के बाद समोच्च कन्टूर सर्वे किया जाना चाहिए। एक छोटे जलागम क्षेत्र का चित्र नं. 1 तथा कन्टूर सर्वे चित्र निम्न प्रकार से बनता है जो चित्र नं. 2 में है।

चित्र नं. 1

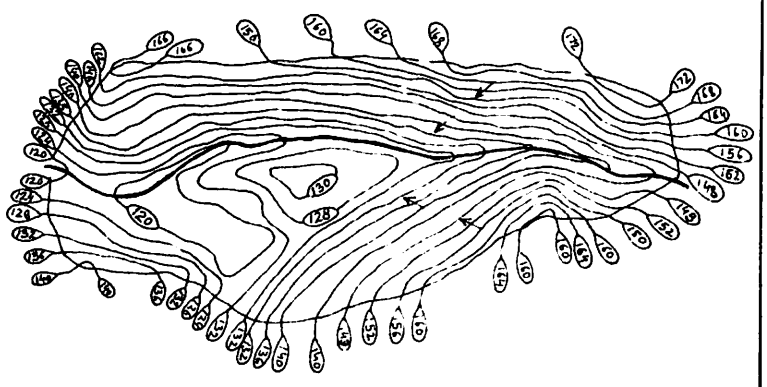

चित्र नं. 2

इस कन्टूर चित्र के अनुसार ही ढाल देखकर कन्टूर बन्डिंग वी डिच, नाला बन्डिंग, जोहड़ व बांध निर्माण का काम किया जाता है। उक्त सर्वेक्षण का काम गाँव के थोड़े पढ़े-लिखे और अनपढ़ लोग भी कर सकते हैं। इस काम को करने के लिए 15 दिन का प्रशिक्षण पर्याप्त है। गाँव के लोगों द्वारा प्राप्त किये जा रहे प्रशिक्षण के लिए चित्र नं. 3 देखें।

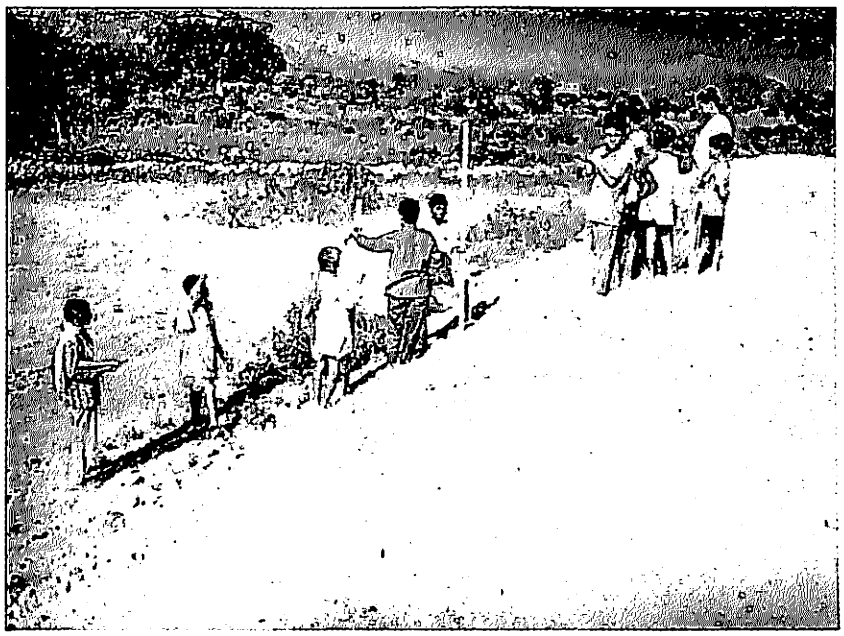

सर्वेक्षण का काम पूरा हो जाने के बाद गाँव के लोगों की समझ में जमीन की ढलान का पूरा विवरण स्पष्ट हो जाता है। इस विवरण पर गाँव के लोग आपस में चर्चा करके अपनी पूरी कार्य-योजना को सुनिश्चित करते हैं। वे जोहड़ या छोटे बांध की साइट का चुनाव करने संबंधी निम्न बातों का ध्यान रखते हैं:

1. सस्ती जगह, कम खर्च वाली
2. लाभ क्या होगा
3. पानी का दबाव कम हो
4. भराव क्षेत्र ज्यादा हो
5. पाल की लम्बाई कम हो– खर्च कम
6. अधिक से अधिक लोग लाभान्वित हों
7. चट्टानों का ढाल अन्दर की ओर हो
8. जगह विवादग्रस्त न हो
9. गरीबों को ज्यादा लाभ मिले
10. पाल बनाने के लिए मिट्टी है या नहीं?
11. सबसे पहले लोगों की राय
12. सार्वजनिक साइड – सबका बराबर हक ओर श्रमदान हो ताकि एक व्यक्ति उसे न दबा सके
13. इससे चेतना का काम होगा या नहीं?
14. मालिकाना किसका है
15. पानी निकलने की जगह कम चौड़ाई की हो
16. अपरा की जगह प्राकृतिक रूप से पक्की होने की सम्भावना
17. विशेष रूप से दो पहाड़ों के बीच
18. जलागम क्षेत्र कितना है– उसके अनुसार ही पाल बनायें
19. जहां पानी का वेग कम हो
20. साइड का उद्देश्य– खेती/पशुपालन में सहयोग

इन बिंदुओं से कार्य-योजना का स्वरूप निर्धारित होता है। योजना के तैयार होने के बाद ही काम का बंटवारा करके तथा जिम्मेदारियों का निर्धारण करके गाँव के लोगों के संगठन और लोक समिति की देख-रेख में काम चालू होना चाहिए।

काम चालू करने के लिए भी गाँव के लोग मिट्टी की किस्म समझकर उसी के मुताबिक भू-जल

संरक्षण संरचनाओं का स्वरूप तय करते हैं। यह सब तय होने के बाद ही भूमि-पूजन करके कार्य शुरू कर दिया जाता है।

1. नींव की साफ सफाई
2. पानी की निकासी का पूरा ध्यान
3. मिट्टी को अच्छी प्रकार दबाया जाये
4. पाल के ऊपर व नीचे का स्लोप सही हो
5. मिट्टी की किस्म पर डिजाइन आधारित हो
6. आस-पास बने पूराने बांधों से सीखना (एवं नकल नहीं करना)।
7. परिस्थिति की पूरी जानकारी - स्थानीय लोगों से काफी चर्चा के बाद
8. डिजाइन वास्तविकता पर आधारित हो, अफलातून न हो।
9. रिसाव की लाइन का पूरा ध्यान रखें।
10. पाल के नजदीक से मिट्टी न ऊठावें, गड्ढा न करें।
11. ऊपर व नीचे का स्लोप कटाव से बचाया जाये।
12. नींव दबे नहीं।
13. भराव क्षेत्र में ऐसी बड़ी जगह न हो जहां बहुत अधिक रिसाव होता हो।

इस काम की शुरुआत के लिए उपयोगकर्ता समूह की सक्रिय भागीदारी जरूरी है। जलागम क्षेत्रों के विकास का काम ऊपर से नीचे की तरफ शुरू होता है। नंगी पहाड़ियों पर ट्रेन्च, नालियाँ बनाने का काम किया जाता है। ये नालियाँ कन्टूर, समोच्च रेखा के आधार पर बनाई जाती हैं। यह काम समान तल (लेवलिंग) निर्धारण के साधारण यन्त्र से भी किया जा सकता है।

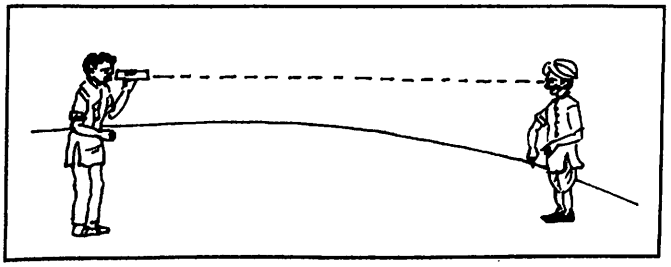

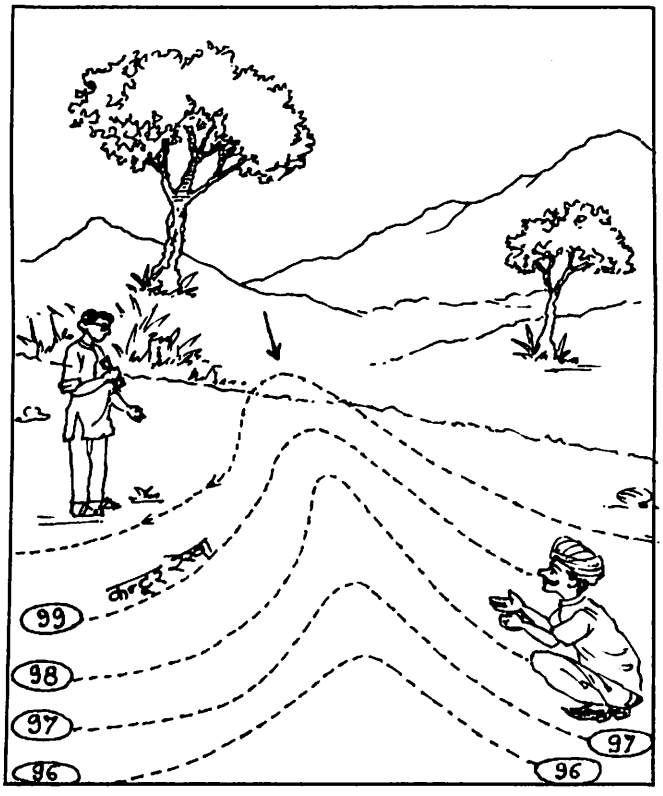

समान तल (लेवलिंग), निर्धारण के साधारण यन्त्र तथा समोच्च रेखा (कन्टूर) बनाना- चित्र नं. 4

जल और मिट्टी के संरक्षण के लिए उपयोग में लाई जाने वाली योजनाओं और कार्यक्रमों के क्रियान्वयन में भूमि सतह पर ऊँचाई और गहराई में स्थित विभिन्न बिन्दुओं के संबंध में जानकारी और सूचनाओं का ठीक-ठीक अनुमान लगाना बहुत आवश्यक है। भूमि सतह पर समान तल का काम (लेवलिंग की प्रक्रिया) उक्त कार्यक्रमों के क्रियान्वयन का महत्त्वपूर्ण भाग है। लेवलिंग के उपयोगों में कन्टूर लाइन ज्ञात करना, कन्टूर खेती, विभिन्न लाइनों या पट्टियों में खेती करना एक ही तल पर खरपच्चियाँ, खाई या नाली बनाना, समान तल पर वानस्पतिक मेड़बन्दी, कन्टूर बांध, समान तलों के आधार पर भूमि को विभिन्न श्रेणी में निश्चित करना, जोहड़, बांध आदि के भराव क्षेत्र ज्ञात करना और नालों में ठोकर, खुर्रा या बेरियर लगाना आदि प्रमुख हैं। देखें चित्र नं. 5 परम्परागत खेती। चित्र नं. 6 कन्टूर आधारित खेती। चित्र नं. 7 कन्टूर पट्टियों में फसल उत्पादन।

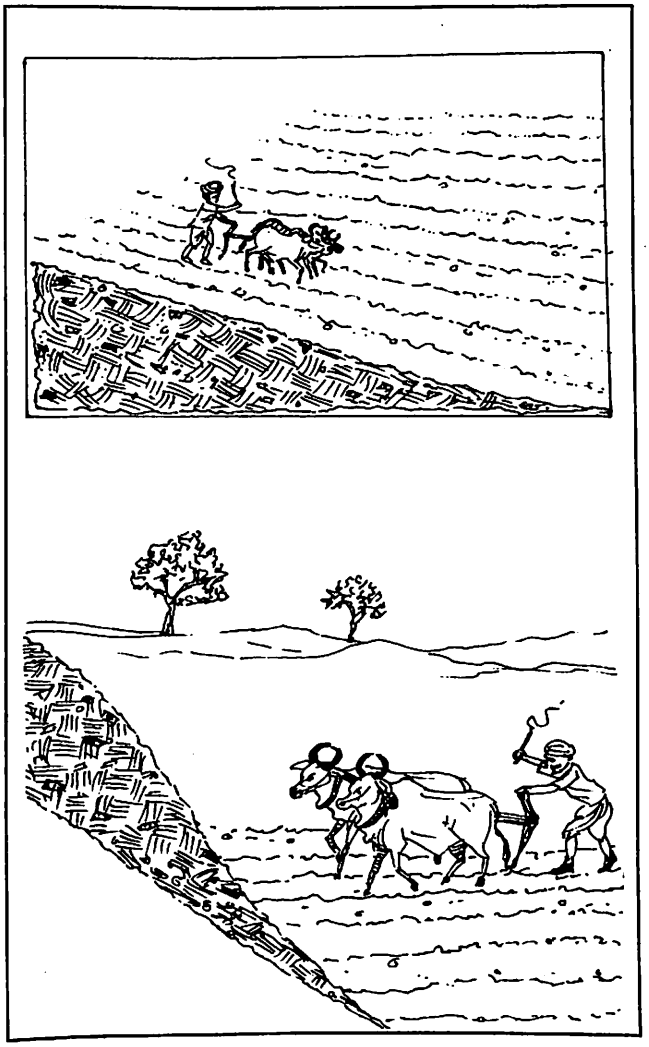

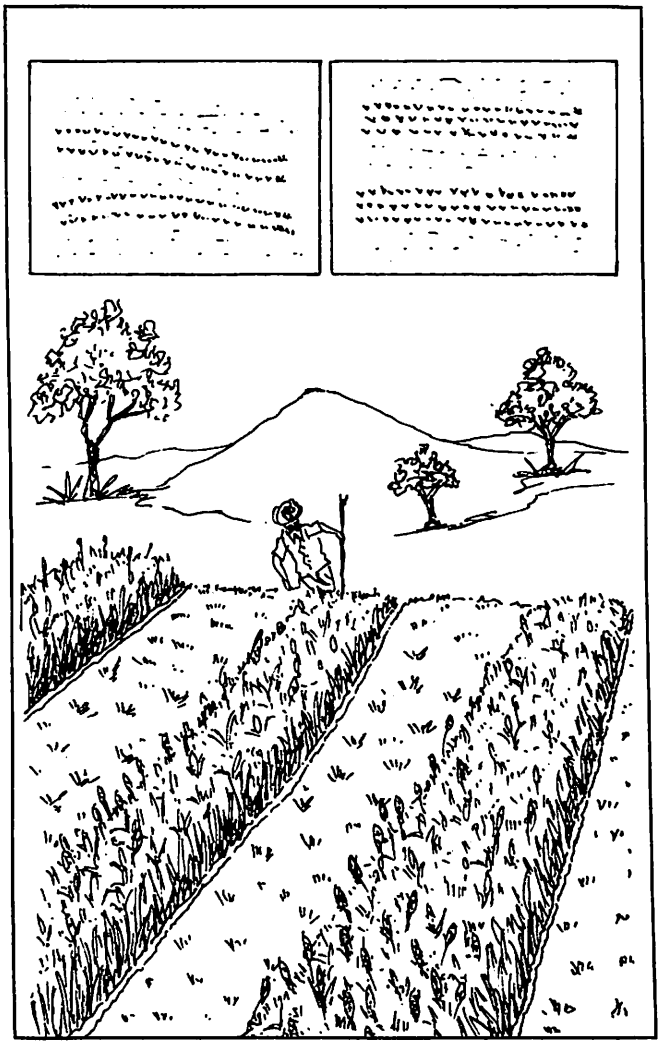

कन्टूर लाइन या समोच्च रेखा : भूमि की सतह पर एक ही तल स्तर अर्थात् लेवल पर स्थित विभिन्न बिन्दुओं को मिलाने वाली कल्पित लाइन को ही कन्टूर लाइन या समोच्च रेखा या समान ऊँचाई पर स्थित रेखा कहा जाता है। फोटोग्राफिक नक्शों पर समान तलों को प्रदर्शित करने का कार्य कन्टूर रेखाएँ ही करती हैं। कन्टूर, जल एवं भूमि संरक्षण की मौलिक विचारधारा के रूप में प्रतिष्ठित है। इसके सम्बन्ध में कुछ प्रमुख तथ्य निम्नवत् हैं:

1. कन्टूर रेखा पर पड़ने वाले सभी बिन्दु एक ही धरातल पर अर्थात् समान ऊँचाई पर स्थित होते हैं।
2. किसी मानचित्र या भूमि सतह पर पास-पास खींची गई कन्टूर लाइनें खड़ी ढाल को प्रदर्शित करती हैं, जबकि दूर-दूर स्थित ये रेखाएँ कम ढाल को दर्शाती हैं।
3. एक समान ढाल पर कन्टूर लाइनें समान रूप से बिखरी रहती हैं।
4. मानचित्र पर कन्टूर लाइनों का पास-पास होने का क्रम पर्वत-शिखर, ऊँचा स्थान या गहरा स्थान, गड्ढा प्रदर्शित करता है।
5. ऊँचा स्थान प्रदर्शित करते समय कन्टूर 'यू' की आकृति बनाता है जिसमें उच्चतम संख्या या आंकड़ा, घेरे के अन्दर की तरफ आता है, जबकि गहरे स्थान के प्रदर्शन में यह 'वी' की शक्ल धारण करता है, जहाँ घेरे के अन्दर की तरफ सबसे कम मान आता है।

धरातल का लेवल निकालने के विभिन्न साधारण यन्त्र : इस कार्य में प्रयुक्त किये जाने वाले विभिन्न उपकरण निम्नवत् हैं:

हैन्ड लेवल: यह एक बहुत साधारण यन्त्र है। इसके उपयोग में एक व्यक्ति जिस क्षेत्र या मैदान में कन्टूर लाइन खींचनी होती है, उसके एक किनारे पर खड़ा होकर आईपीस की मदद से हैन्ड लेवल के बुलबुले को केन्द्र में रखते हुए आवश्यकतानुसार सामने वाले व्यक्ति को ऊपर-नीचे करता हुआ आगे देखता है। इस प्रकार थोड़े-थोड़े अन्तराल के बाद खूंटे या पत्थर से निशान लगाते हुए कन्टूर लाइन बनाई जाती है।

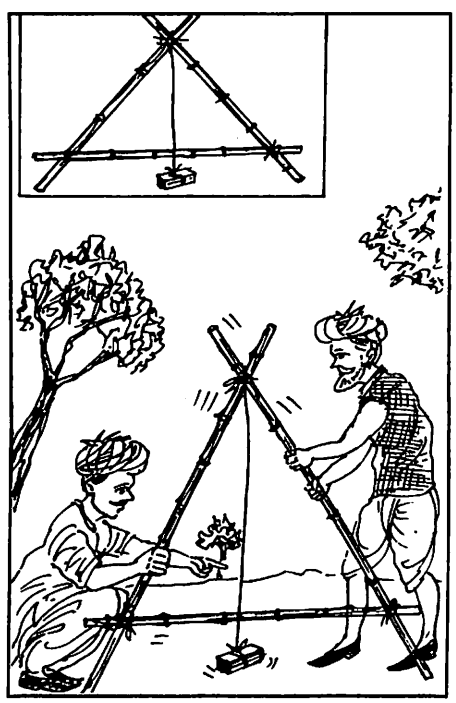

'ए' फ्रेम: यह साधारण युक्ति या यन्त्र, लेवलिंग फ्रेम या 'ए' फ्रेम के नाम से जाना जाता है। इस उपकरण में केवल तीन लकड़ी के डण्डे या बांस के टुकड़ों को त्रिभुजाकार आकृति में रस्सी से बांधकर, चित्रानुसार, एक रस्सी से पत्थर का छोटा टुकड़ा बांधकर उससे साहुल का काम लिया जाता है। इसके उपयोग में सर्वप्रथम, क्षैतिज बंधे डण्डे पर 'ए' फ्रेम का केन्द्र निकालकर निशान लगा लेते हैं। इसके लिए किसी निश्चित स्थान पर 'ए' फ्रेम को रखकर, बीच में पत्थर से बंधी डोरी के ठहर जाने पर क्षैतिज बांस पर निशान लगा लेते हैं। अब 'ए' फ्रेम की दोनों खड़ी भुजाओं के स्थान आपस में बदलकर 180 डिग्री घुमाकर क्षैतिज बांस पर दोबारा रस्सी के ठहर जाने पर निशान लगा देते हैं। इस प्रकार प्राप्त दोनों निशानों का मध्य बिन्दु ही 'ए' फ्रेम का केन्द्र होता है। केन्द्र ज्ञात करने के बाद इस यन्त्र की मदद से कन्टूर लाइन निकालना शुरू किया जाता है। इस प्रक्रिया में एक निश्चित बिन्दु पर 'ए' फ्रेम की एक भुजा को टिकाकर दूसरी भुजा को ऊपर-नीचे रखते हुए, ऐसे स्थान पर रखते हैं, जहाँ रखने से 'ए' फ्रेम के मध्य में लटकी रस्सी क्षैतिज बांस पर लगाये गये केन्द्र पर रुक जाये। इसके बाद 'ए' फ्रेम की दूसरी भुजा को उसी स्थान पर रखते हुए, पहली भुजा को 180 डिग्री घुमाकर नया स्थान पूर्ववत् खोजते हैं। यहाँ निशान लगाकर, इसी क्रम को दोहराते जाते हैं। इस प्रकार हमें कन्टूर रेखा प्राप्त हो जाती है। चित्र 'ए' फ्रेम को उपयोग में लेने की विधि:

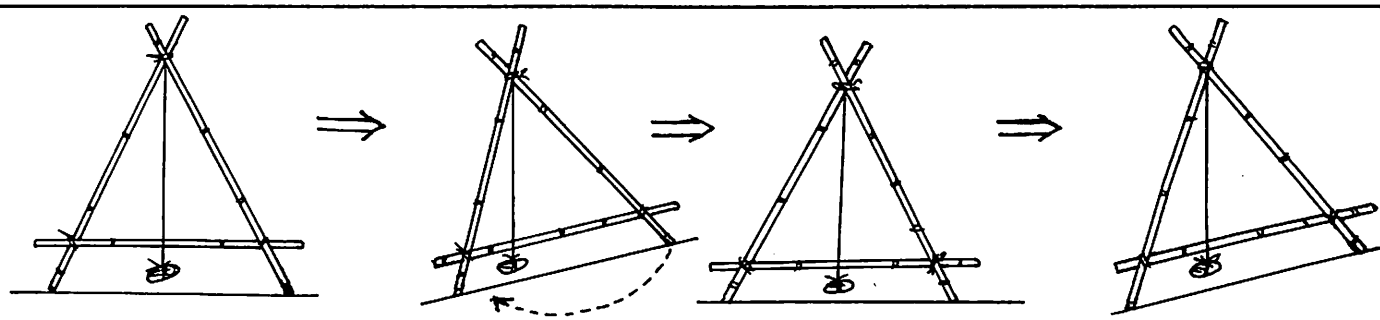

स्टेन्ड स्प्रिट लेवल: इस साधारण से यन्त्र की मदद से कन्टूर लाइन आसानी से मालूम हो जाती है। जैसा कि चित्र में प्रदर्शित है, इसके उपयोग में स्प्रिट लेवल के बुलबुले को केन्द्र में रखते हुए इसके दोनों पैरों को 'ए' फ्रेम की तरह ही 180 डिग्री घुमाते जाते हैं तथा खूंटी या पत्थर से जमीन पर निशान बनाते जाते हैं, जिनको मिलाने से सही कन्टूर लाइन ज्ञात हो जाती है। चित्र नं. 10 देखें।

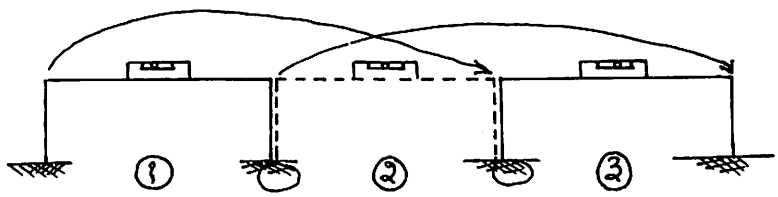

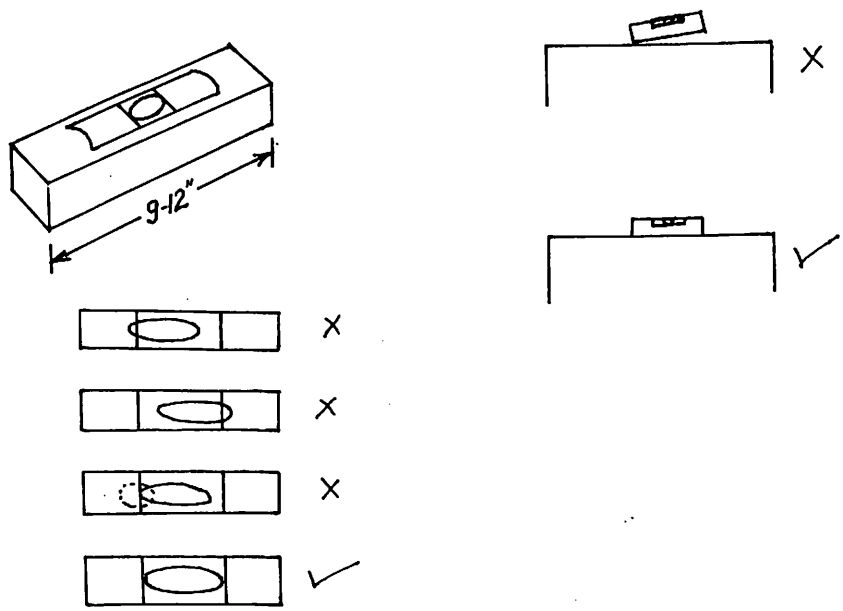

लाइन डोरी लेवल : इस विधि में दो बांस के टुकड़े, स्प्रिट लेवल, डोरी और पैमाने की आवश्यकता होती है जैसा कि चित्र नंबर 11 में दिखाया गया है।

एक आदमी किसी निश्चित स्थान पर बांस को सीधा खड़ा करके डोरी के एक सिरे को बांस में लपेटकर खड़ा हो जाता है, जबकि दूसरा व्यक्ति दूसरे बांस को सीधा पकड़कर डोरी के दूसरे सिरे को बांस में लपेट लेता है। अन्य तीसरा व्यक्ति स्प्रिट लेवल को डोरी के मध्य में लटकाकर इसके बुलबुले को देखता रहता है। दूसरे व्यक्ति के बांस पर लिपटी डोरी को ऊपर-नीचे खिसकाने से जब बुलबुला केन्द्र

में आ जाता है, तब पहले बांस पर ली गई माप की तुलना में दूसरे बांस पर घटी या बढ़ी माप को नोट कर लेते हैं। अब दूसरे बांस को उसी स्थान पर रखते हुए, पहले बांस को लगभग 180 डिग्री घुमाकर अन्य स्थान पर रखा जाता है। वहाँ रखने के बाद पुनः उसी क्रिया को दोहराया जाता है तथा पहले बांस की अपेक्षा दूसरे बांस पर घटी या बढ़ी लम्बाई को पैमाने से मापकर नोट कर लेते हैं। इस प्रकार प्राप्त मापों का गणितीय रूप ध्यान में रखकर 'आर. एल.' लेवल ज्ञात कर लेते हैं। इस यन्त्र की मदद से किसी दिये गये बिन्दु के तल (लेवल) में अन्य बिन्दु को आसानी से खोजा जा सकता है। इस यन्त्र के उपयोग में निम्न बातों को ध्यान में रखना अति आवश्यक है। चित्र नं. 11 देखें।

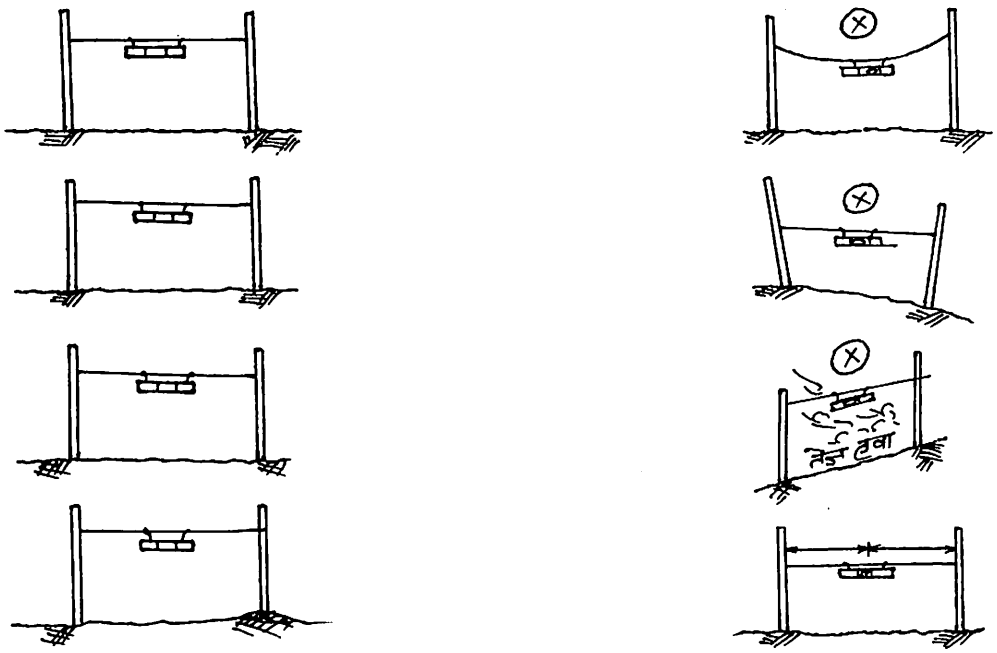

सावधानियाँ :

1. इस युक्ति के प्रयोग के समय तेज हवा न चल रही हो क्योंकि तेज हवा के झोंकों से डोरी हिलने के कारण बुलबुले के केन्द्र में आने की सही स्थिति का पता नहीं चल पायेगा।
2. बांस या डण्डे हमेशा सीधे खड़े करने चाहिए।
3. स्प्रिट लेवल को सदैव डोरी के मध्य में लटकाना चाहिए।
4. डोरी की लम्बाई कम रखनी चाहिए।
5. आंख को स्प्रिट लेवल के केन्द्र के ऊपर सीध में रखकर ही बुलबुले को देखना चाहिए।

पानी की ट्यूब लेवल : यह भी अति साधारण यन्त्र है, जिसमें दो सीधे बांसों के अतिरिक्त, पानी से भरी पारदर्शक नली और पैमाने की आवश्यकता होती है। चित्र में दर्शाये अनुसार पानी से भरी नली को दोनों बांसों पर बांधकर लेवल लिया जाता है। निश्चित स्थान पर एक बांस को रखकर दूसरे बांस को दूसरे स्थान पर रखते हुए पानी का लेवल देखते हैं तथा पहले बांस की अपेक्षा दूसरे बांस पर घटी या बढ़ी माप को पैमाने से मापकर लिख लेते हैं। बांसों को उक्त युक्तियों की तरह बदलकर मापों को लिखते जाते हैं।

अन्त में मापों के गणितीय स्वरूप को ध्यान में रखकर दिये गये किसी बिन्दु के समान लेवल वाले बिन्दु को ज्ञात कर लेते हैं। इस यन्त्र के उपयोग में निम्न बातें ध्यान में रखी जानी चाहिए:

1. बांस सीधे रहने चाहिए।
2. तेज धूप, यन्त्र उपयोग के समय न हो।
3. पानी का लेवल देखते समय आंख को पानी के लेवल की सीध में रखना आवश्यक है।
4. बांसों को इस तरह न उठायें कि ट्यूब से पानी निकल जाये।
5. नली के दोनों सिरों पर पानी में कुछ बूंदें स्याही या रंग की डालने से लेवल साफ दिखाई देता है। माप तथा गणना सही रहनी चाहिए।

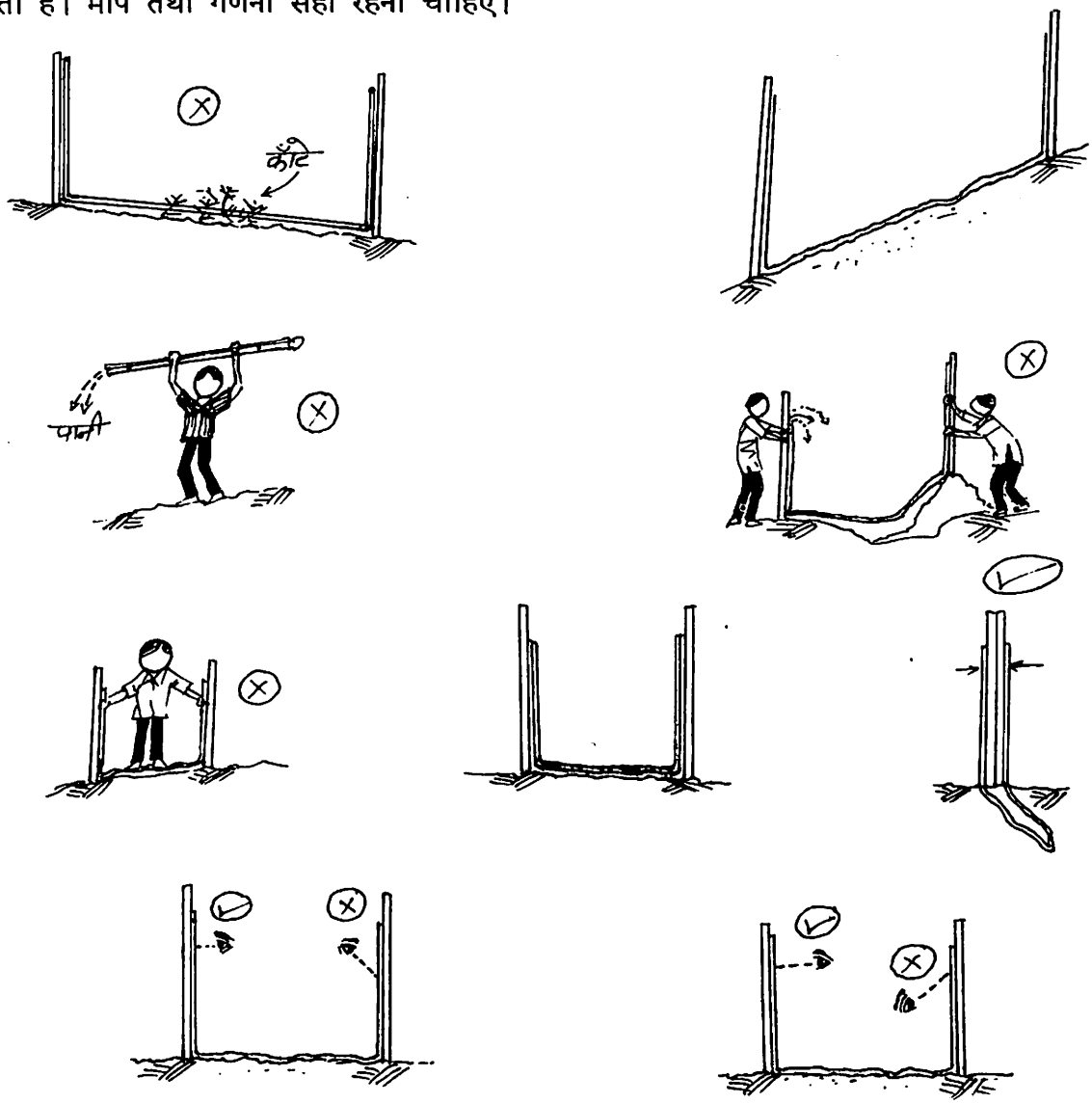

ऊपर वर्णित विधियों में हैण्ड लेवल, स्प्रिट स्टेण्ड लेवल तथा 'ए' फ्रेम कन्टूर रेखा निकालने तथा लाइन लेवल एवं वाटर ट्यूब लेवल किसी दिये गये बिन्दु के लेवल या समान तल में दूसरे नये बिन्दु को खोजने में काम आते हैं। इन सभी यन्त्रों को तथा इनके उपयोग की विधि को यहाँ चित्रों द्वारा भी समझाया गया है। इन यन्त्रों को एक बार देख लेने तथा थोड़े से अभ्यास से ही इनकी उपयोग विधि में दक्षता प्राप्त की जा सकती है। आजकल उच्च टेक्नोलोजी से निर्मित कई यन्त्र बाजार में उपलब्ध हैं,

जो बहुत महँगे होने के साथ-साथ उन्हें उपयोग में लाना भी काफी कठिन है, मगर यहाँ वर्णित यन्त्र बहुत सस्ते होने के साथ-साथ परम्परागत ढंग से और बहुत आसानी से उपयोग में लाये जा सकते हैं।

खाइयां बनाना :

जलागम विकास के लिए नंगी पहाड़ियों पर तैयार की गई खाइयों का एक सरकारी प्रयास : ये खाइयां ढाल के अनुरूप समोच्च-रेखा पर नहीं हैं: चित्र नं. 13

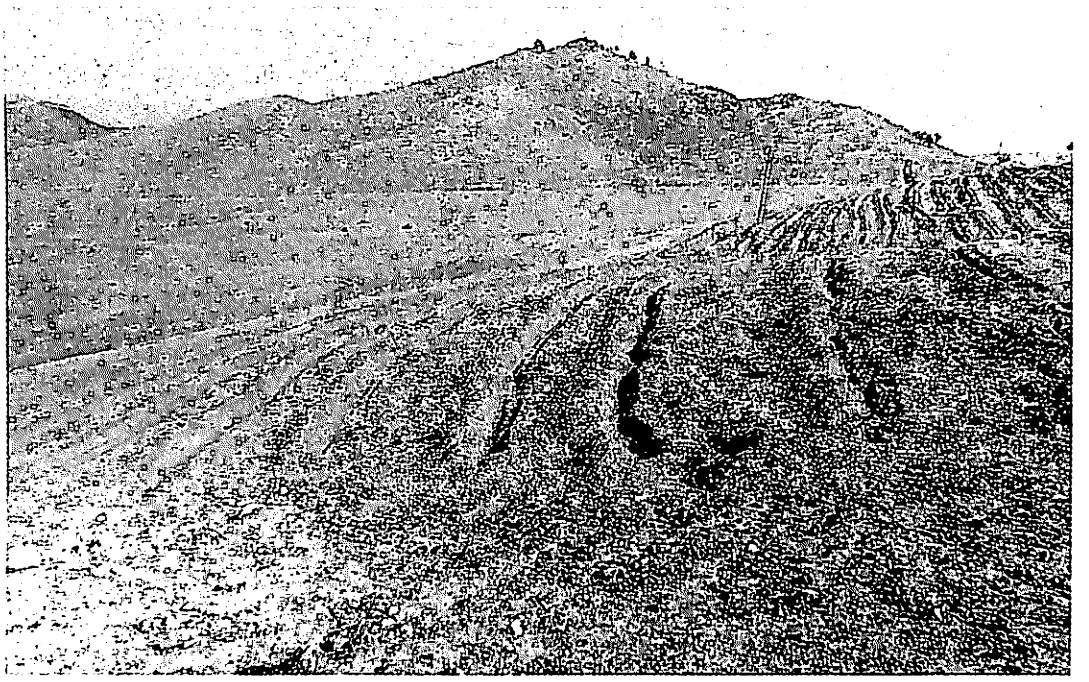

नाला बन्डिंग :

ढलान पर बनाई गई खाइयों के नीचे नालियाँ, जो जमीन के कटाव की नालियाँ व नाले होते हैं, उनमें नाला बन्डिंग का काम किया जाता है। चित्र नं. 14

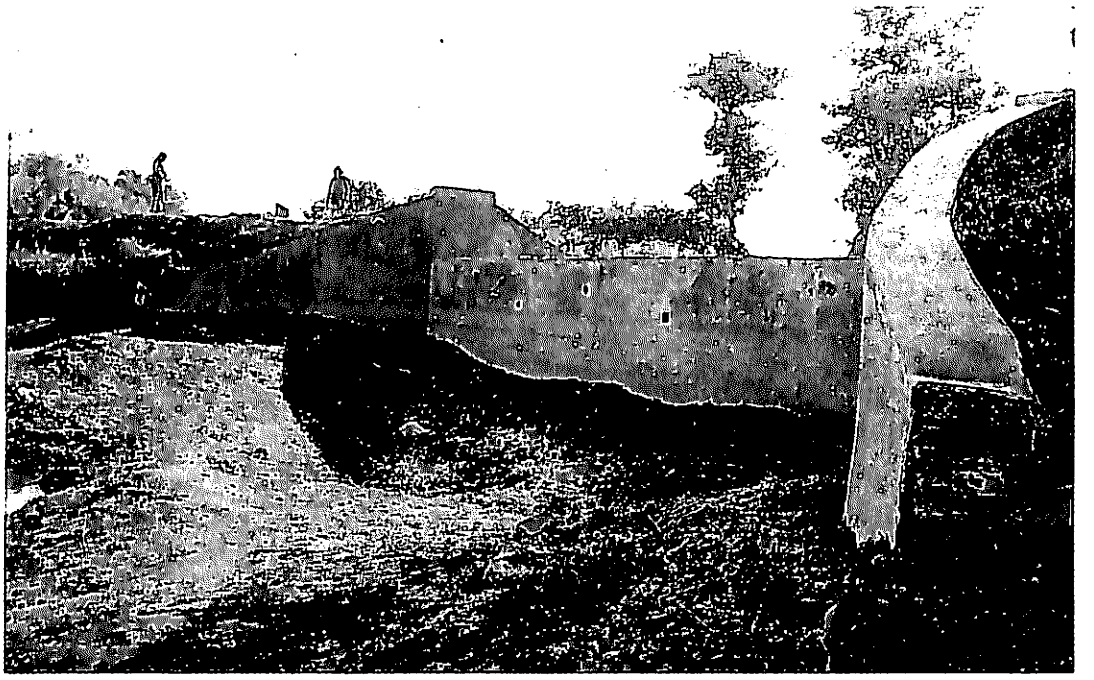

पक्का खुर्रा व ढीले पत्थरों का खुर्रा :

पानी के बहाव को धीमा करने के लिए वेजीटिबिल बेरियर **वनस्पति** से पानी के वेग को कम करने या खुर्रा लगाने का काम लिया जाता है। यह तरीका हमारे समाज में बहुत दिनों से काम में लिया जा

रहा है। आजकल भी तेज ढाल की जमीन पर खुर्रा बनाकर, पानी के वेग को कम कर दिया जाता है। इससे अधिकतर पानी जमीन में चला जाता है और जमीन में नमी बनी रहती है। यह काम छोटे नालों पर ही प्राय: किया जाता है। (चित्र नं. 15- पक्का खुर्रा, चित्र नं. 16 ढीले पत्थरों का खुर्रा)।

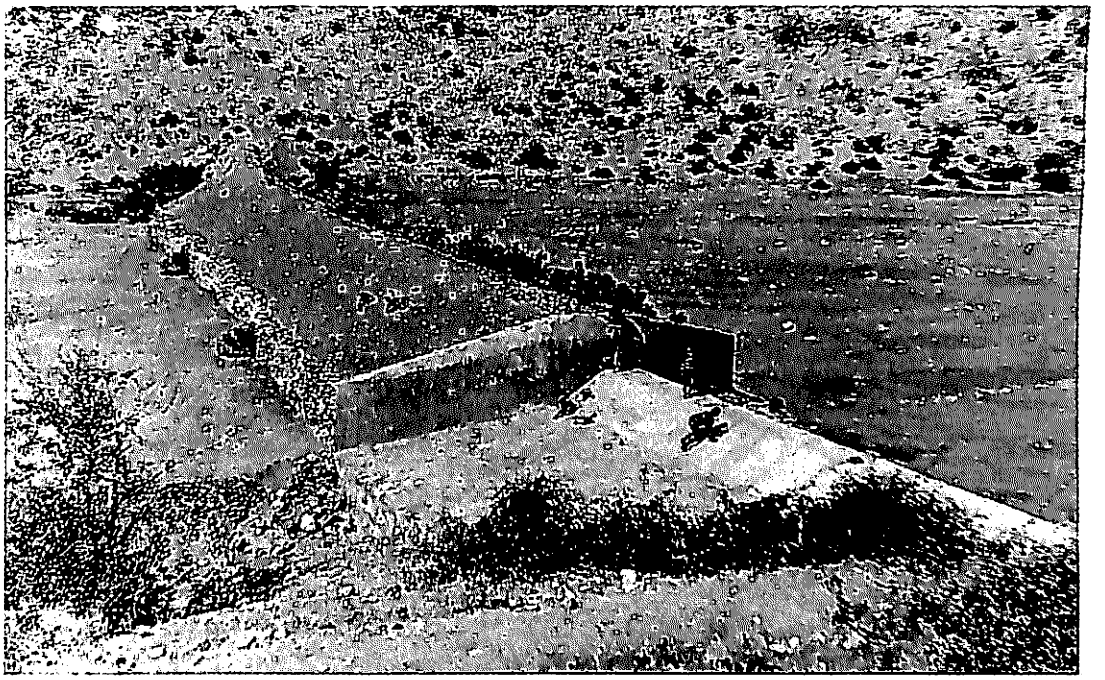

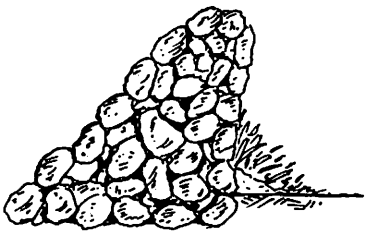

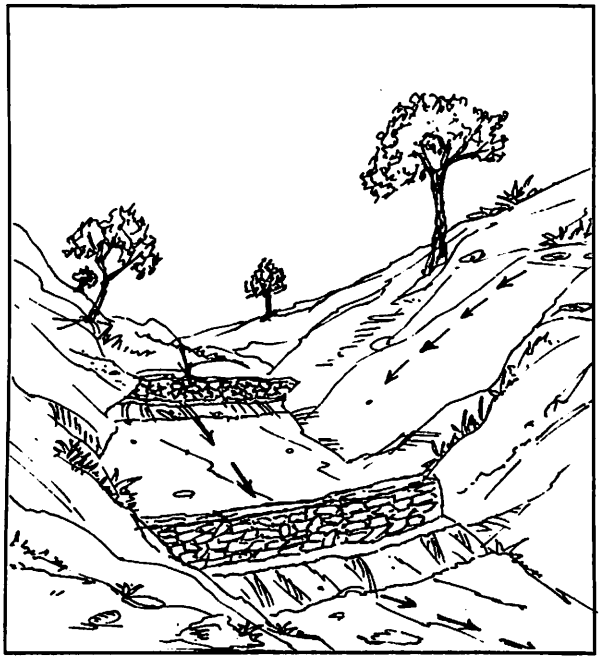

मेड़बन्दी : हिमालय क्षेत्र के किसान सदियों से अपने बहते वर्षा जल को तथा मिट्टी को वहीं खेत में रोकने का काम करते आये हैं। इस विधि को अधिकतर किसान जानते हैं, लेकिन बीच के दौर में यह परम्परागत मेड़बन्दी का काम हमसे छूट गया था। मेड़बन्दी का काम करना अत्यन्त जरूरी व लाभदायक है, यह कार्य कई प्रकार से किया जाता है।

1. **वनस्पति मेड़बन्दी :** किसान अपने खेत के ढलान को देखकर व कटाव रोकने के लिए एक निश्चित लाइन खींचकर उसमें वनस्पति की बाड़ लगा देते हैं,जिससे वर्षा का जल धीमे वेग से चलता

है। इस प्रकार अधिकतर पानी भूमिगत हो जाता है तथा मिट्टी का कटाव नहीं करता। चित्र नं. 17

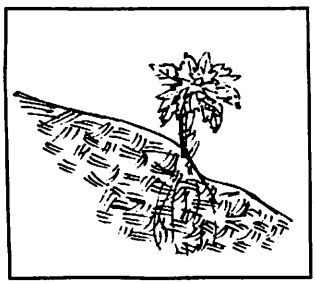

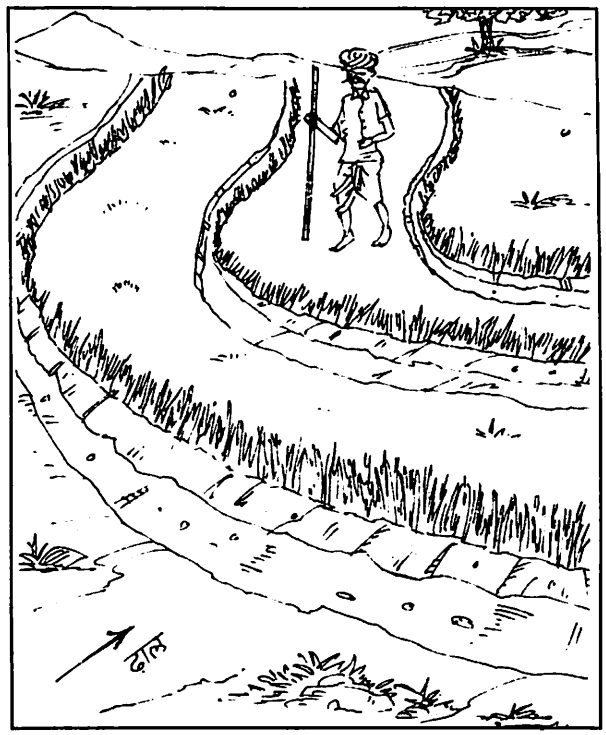

2. मिट्टी की मेड़बन्दी: जिन खेतों में ढलान कम होता है, उनमें दो से ढाई फुट ऊँची मिट्टी की मेड़बन्दी करके पानी के निकलने के लिए एक छोटी सी पक्की अपरा बना दी जाती है। सूरतगढ़ गाँव में मेड़बन्दी का चित्र निम्नवत् है: चित्र नं. 18

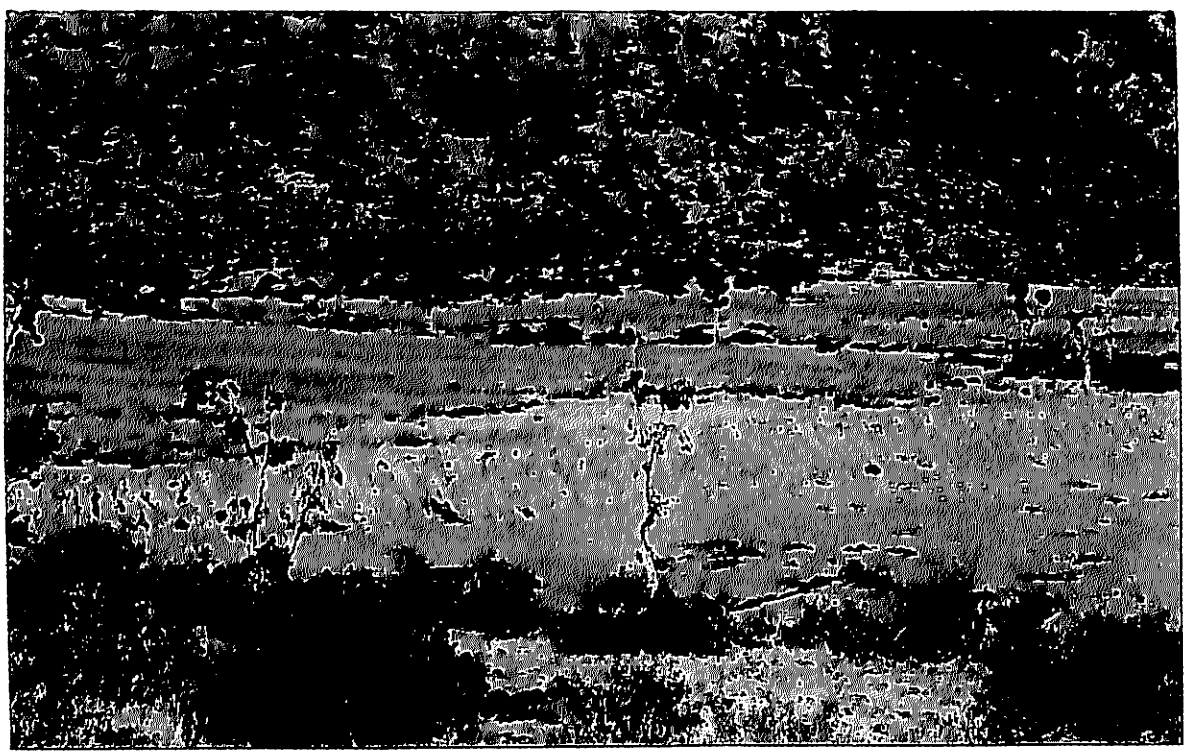

3. **गोचर विकास :** जलागम क्षेत्रों के विकास कार्यों में पशुओं के लिए चारे की व्यवस्था हेतु गोचर विकास का काम एक महत्त्वपूर्ण कार्यक्रम है। इस काम को करने के लिए गांव की सर्वसम्मति अत्यन्त आवश्यक है। गांववासी आपस में मिल-बैठकर यह तय करते हैं कि उनके पशुओं के लिए जो गोचर उपलब्ध है, उसमें अच्छी घास व पेड़-पौधे लगाना अत्यन्त जरूरी है, क्योंकि यह क्षेत्र खेती के साथ-साथ पशुपालन पर भी निर्भर करता है। गोचर विकास से गांव में दुग्ध व घी का उत्पादन बढ़ता है। गोपालपुरा गांव में गोचर विकास एवं वन विकास से खुशहाली आई है। गोपालपुरा में गोचर का चित्र निम्नवत् है।

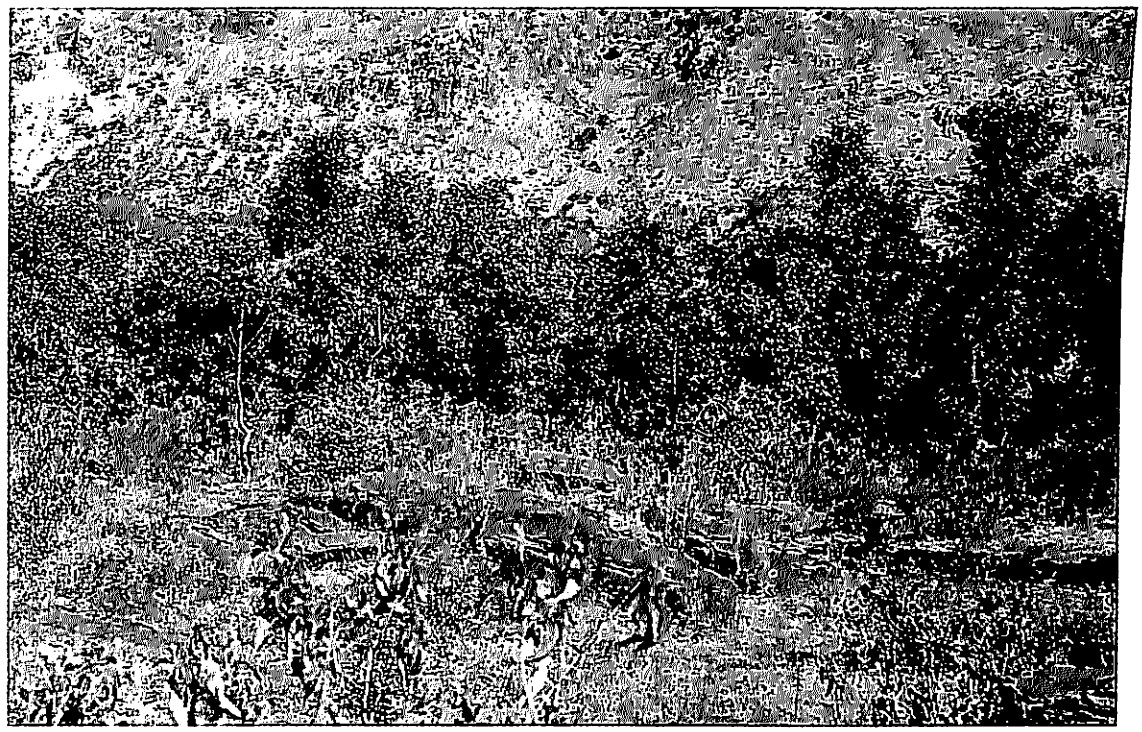

चैकडेम/एनीकट : बड़े नालों एवं छोटी नदियों पर चैकडेम बनाकर बहते वर्षा- जल को रोका जा सकता है। इससे जो जमीन का उपजाऊपन पानी के साथ बहकर चला जाता है, उसे रोकने से खेतों का उपजाऊपन बढ़ता है, तथा सूखे कुएँ पानी से भरने लगते हैं, जिससे किसानों को

किशोरी की नदी पर बना एनीकट जिसके कारण बहुतायत में मिलता जल व अच्छी फसल।

सिंचाई के लिए जल मिलता है। इससे एनीकट के अन्दर व बाहर दोनों तरफ ही नमी बढ़ जाती है, जिससे फसलों में पैदावार बढ़ जाती है।

सूरतगढ़ गांव के नाले पर बना एक छोटा चैकडेम चित्र नं. 21

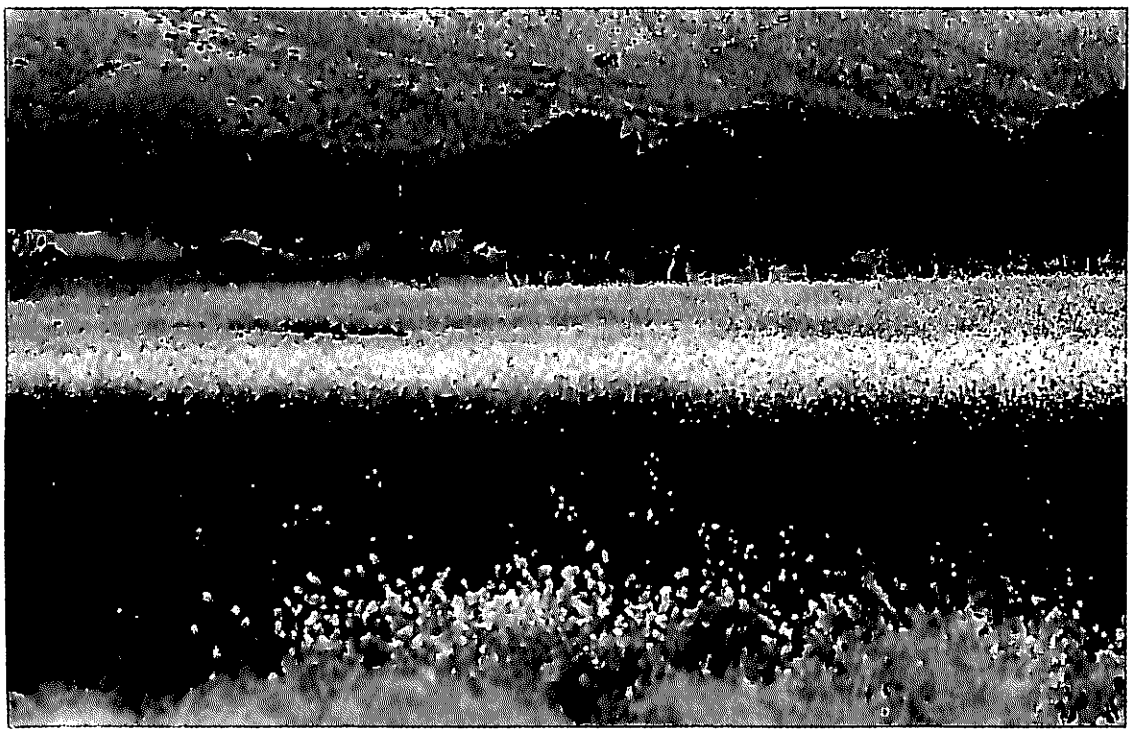

खेती व गोचर विकास हेतु जोहड़ :
जलागम क्षेत्र में वर्ष भर पानी रोकने के लिए जोहड़ का निर्माण किया जाता है। इससे पशुओं को पीने के लिए पानी मिलता है तथा कुओं में जल तथा खेतों में नमी बढ़ती है। जोहड़ बनाने से पशु-पालन एवं खेती दोनों में ही बहुत फायदा होता है। भॉवता गांव के नाहरसिंह नामक जोहड़ का चित्र देखिये। इसके बनने के आठ साल बाद इसके नीचे की तरफ भारी संख्या में बड़े-बड़े पेड़।

पशुओं के लिए जोहड़ : राडा गांव के जोहड़ में जून के महीने में पानी पीते हुए पशु
चित्र नं. 23

चित्र नं. 24

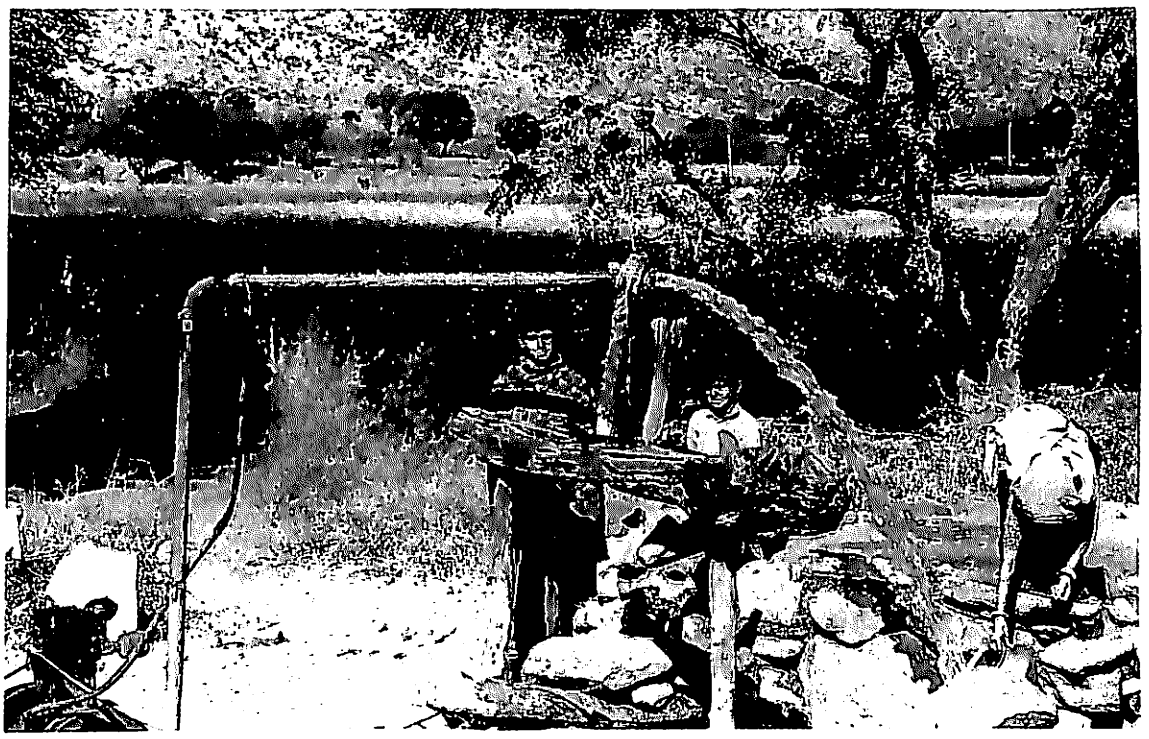

मिट्टी का बांध : खेती की जमीन पर या शामिलाती जमीन पर भी पानी रोकने के लिए मिट्टी के छोटे-छोटे बांध बनाये जाते हैं। उन बांधों के पेटे में एक फसल उगाई जाती है। लेकिन यह एक फसल ही बिना कुछ अधिक खर्च किये बहुत अच्छी होती है। एक फसल में ही दो फसलों से अधिक पैदावार हो जाती है। क्योंकि बांध के पेटे में हमेशा अच्छी नमी व मिट्टी की उत्पादकता बनी रहती है। इसलिए पेटे की जमीन में सबसे अच्छी फसल पैदा होती है। इसके कारण इसके नीचे की तरफ के कुएं पानी से लबालब भर जाते हैं। भाँवता गांव के ठाकुरों वाला कुआँ पिछले 20 वर्षों से सूखा पड़ा था। पिछले वर्ष बांध बन जाने के कारण यह पानी

से लबालब भर गया है। चित्र में दिख रहे कुओं पर बांध के कारण ही इंजन लग गये हैं। अब इस कुएँ का पानी इंजन से भी नहीं टूटता।

वन विकास: जलागम क्षेत्रों में वनों के विकास का काम भी किया जाता है। इससे पशुओं को चारा, ईंधन मिलने के साथ-साथ स्वच्छ प्राणवायु मिलती है। वातावरण में शुद्धता रहने से फसल तो अच्छी होती ही है, साथ-साथ पशु और आदमी निरोग रहते हैं। इसलिए वनों का विकास भी अत्यन्त ही जरूरी है। देवरी गांव के जलागम क्षेत्र में विकास से आस-पास के लगभग 20 गांवों के कुओं में पानी उपलब्ध हो गया है। पशुओं व जंगली जानवरों व पक्षियों को वर्ष भर पानी पीने को मिलने लगा है तथा पानी का झरना भी इससे बहना शुरू हो गया है। देवरी के वन जलागम क्षेत्र का चित्र देखने से यहाँ की सुन्दरता का आभास होता है। चित्र नंबर 25

जलागम क्षेत्रों के विकास के लिए मुख्यत: उक्त 9 प्रकार की गतिविधियाँ ही चलाना जरूरी हो ऐसा नहीं है। अन्य कुछ और प्रवृत्तियाँ चालू की जा सकती हैं।

अजबगढ़ जलागम क्षेत्र में पावडी परियोजना के तहत किये जाने वाले जलागम विकास के कार्यों में लोगों को स्वयं तैयार होकर उक्त प्रकार की प्रवृत्तियाँ चालू करनी चाहिए। तरुण भारत संघ एवं राजस्थान सरकार मिलकर जलागम विकास के कार्यों में लोगों की मदद करेगी । नेहड़ा के लोग अपने जल, जंगल, जमीन को सुधारने के लिए अब तैयार होकर जुटे हैं। इस क्षेत्र में जिन्होंने जल, जंगल व जमीन को सुधारने का काम किया है, वे अब सुखी और समृद्ध हैं। आप भी सुखी व समृद्ध होना चाहते हैं तो आज ही अपने खेत, गोचर, जंगल को सुधारने के लिए पावडी परियोजना के दफ्तर थानागाजी अजबगढ़ या तरुण भारत संघ से सलाह लेकर काम शुरू करें।

चित्र नंबर 25

सूरतगढ़ वाटरशेड के हरेभरे जंगल में अब चराई के लिए जाते हुए पशु।

भाँवता गांव का महिला संगठन अपने वाटरशेड को हराभरा करने के लिए पौधे ले जाता हुआ।

जलागम विकास के लिए सबक

जलागम विकास का काम प्रकृति के साथ आत्मसात् होने जैसा है! जब मानव प्रकृति से उतना ही लेता है, जितना प्रकृति को वह अपने श्रम से दे सके, तो प्रकृति का सन्तुलन बना रहता है! और जब वह प्रकृति से केवल लेता ही रहे और श्रम करके वापस प्रकृति को सुधारने का काम नहीं करता है तो वह गीता के अनुसार चोर बन जाता है।

'प्रकृति मानव की जरूरत को पूरा कर सकती है', लेकिन उसके भोग-वासना की पूर्ति नहीं कर सकती। यदि मानव प्रकृति से अपनी भोग-वासना पूरी करेगा तो यह चीं बोल जायेगी, फिर हमें पहाड़ों से फल-फूल, घास-चारा, जड़ी-बूटी नहीं मिलेगी और नदी, नाले, कुएँ सब सूख जाएँगे! तब मानव का जीवन असम्भव होगा! आज हमने यही रास्ता पकड़ लिया है! ठहरें और महात्मा गांधी की तरफ देखें और उनके बताये रास्ते पर चलकर देखें, तभी हम जलागम विकास का काम करके सुखी व समृद्ध बन सकते हैं।

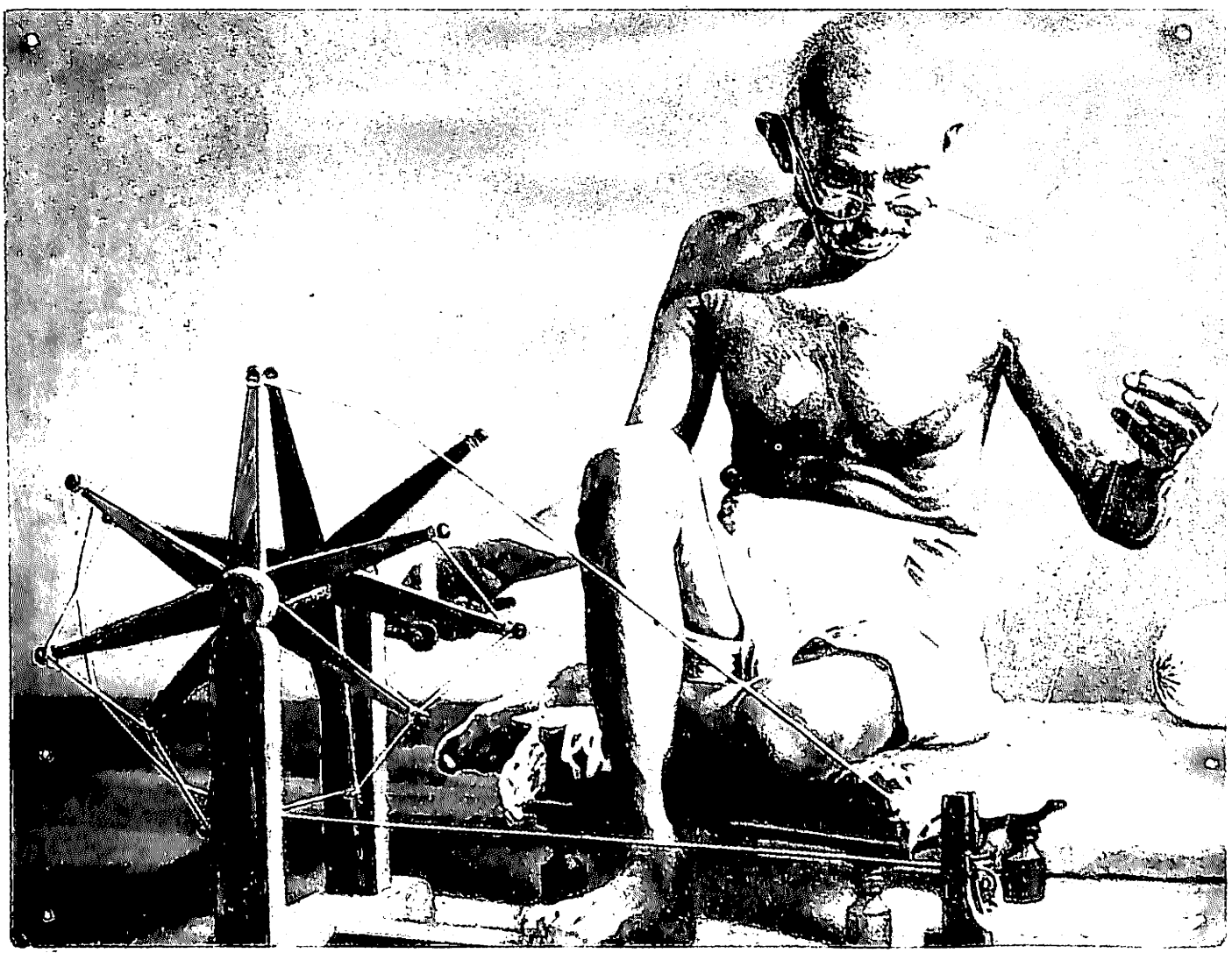

जलागम विकास के काम में कठिनाइयाँ

यह काम प्राकृतिक संसाधनों के संवर्द्धन व उपयोग से जुड़ा हुआ है। इसलिए आर्थिक लाभ-खर्च की बात तो इसमें है ही साथ ही साथ किसी एक का निजी लाभ-खर्च नहीं बल्कि साझा-समूह का लाभ-खर्च जुड़ा हुआ है। जहां समूह की साझी-शामिलाती सम्पत्ति के संवर्द्धन, उपयोग की बात आती है, तो पूरी सामाजिक व्यवस्था का आचार-विचार, सोच-समझ, व्यवहार-कौशल, क्षमताएं सब कुछ इस जलागम विकास के काम को प्रभावित करती हैं।

इस काम में कानूनी अड़चनें सबसे अधिक हैं क्योंकि सरकार के अलग-अलग अधिनियम हैं। वन संरक्षण अधिनियम के कारण वनों के अन्दर रहने वाले लोग वनों में बिना वन विभाग की अनुमति के कुछ नहीं कर पाते। इसी प्रकार सिंचाई विभाग की अनुमति के बिना भी वे कुछ नहीं कर सकते। नदी, नाले, खाई, सब किसी न किसी सरकारी बांध के कैचमैन्ट, जलग्रहण क्षेत्र में आते हैं। इसलिए सिंचाई विभाग ही इस काम में बाधा पैदा करता है। इस काम को रोकने के लिए सबसे पहला नोटिस सिंचाई विभाग की तरफ से आता है।

जलागम विकास के काम के लिए भू-अभिलेखों की जानकारी रखना अत्यन्त जरूरी है। और ये सब रिकार्ड सरकार के कार्यालय में बन्द रहते हैं या किसी अधिकारी, कर्मचारी के कब्जे में होने के कारण इन्हें प्राप्त करना बहुत ही कठिन काम है।

सरकार के अधिकारी एक खास किस्म की पढ़ाई व योग्यता के कारण सरकार में पद पाते हैं। इनकी इस पढ़ाई के कारण इनका मस्तिष्क एक खास दिशा में ही चलता है। इनके मस्तिष्क का तकनीकीकरण होने के कारण इसमें लोगों की जरूरतों को ध्यान में रखकर काम करने की सम्भावना कम होती जाती है।

कई बार लोगों की प्राथमिकताएँ सरकारी अधिकारियों की प्राथमिकताओं से मेल नहीं खाती हैं। कभी कोई अधिकारी अपनी प्राथमिकताओं से मेल बैठाने का उपाय करता है तो सरकारी ढाँचे के भारी-भरकम होने के कारण उसके किसी एक हिस्से की समझ में उस अधिकारी की भी बात ठीक से नहीं बैठे तो भी समस्या उत्पन्न हो जाती है। इससे कार्य ठीक से आगे नहीं बढ़ पाता।

सरकार जहाँ-जहाँ जलागम विकास कार्य कर रही है, वहाँ-वहाँ लोगों की किसी भी स्तर पर निर्णय लेने में कोई भागीदारी नहीं होती। होता यह है कि रात में ठेकेदार के लोग आकर जलागम विकास का कार्य करते हैं। इसका परिणाम यह आता है कि जहाँ लोगों को जरूरत होती है, वहाँ तो वे अपने मेड़बन्दी आदि के कार्यों को रहने देते हैं, अन्यथा बनते ही उसे तोड़ देते हैं। इस तरह बनाने में सरकार के खाते से खर्च होता है तो फिर उसे तोड़ने तथा पहले जैसा बनाने में किसान को मेहनत करनी पड़ती है।

इस प्रकार के काम से जलागम विकास के विरुद्ध ही वातावरण बनता है। लोगों में भी जलागम विकास के साझे काम को करने के संस्कार कम होते जा रहे हैं। इन्हें पुनर्जीवित करने तथा कमजोर लोगों को इन कार्यों में पुनः लगाने हेतु हमें कुछ ''मॉडल'' तैयार करने हैं।

भारत में जंगल, जमीन व जल को दाता 'देवता' माना जाने के कारण इनसे केवल प्राप्त करने की ही मानसिकता समाज में व्याप्त है। हमारी ऋषि परम्परा समाप्त होने से समाज में प्रकृति से जितना लिया, उतना ही अपने श्रम से प्रकृति को वापस लौटाने के सनातन संस्कार समाप्त होने के कारण हम श्रम से जी चुराने लगे हैं जबकि जलागम विकास का कार्य श्रमसाध्य है। श्रमसाध्य काम समाज की ''श्रम निष्ठा''

से पूरे होते हैं। आज के समाज में श्रम निष्ठा की प्रतिष्ठा पैदा करना चेतनामूलक काम है। सरकार में इस प्रकार के चेतनामूलक काम करने की कोई प्रतिबद्धता होती ही नहीं है।

समाज में आजकल जिस प्रकार की शिक्षा का प्रभाव है, वह तो श्रमविरोधी है। इस दिशा को बदलना अब सरल नहीं है। आज जहाँ कहीं भी जलागम विकास के काम सरकारी प्रयास से हुए हैं, उन सबमें पुराने परम्परागत काम को ही नया बनाकर अधिकतर नाप लिया गया है या उसे नया काम बता दिया गया है। ऐसा सहाबी जलागम विकास कार्यक्रम में खुलेआम चलता हमने देखा है। इसके कारण हमें भी परेशानी उठानी पड़ी थी। हमने गांव में हुए प्रत्येक काम का कुल खर्च गांव की सभा बुलवाकर, जिन गांववासियों के पास हिसाब था उनसे प्रत्यक्ष रूप से रखवाया। जहाँ गांववासियों ने इसे बराबर लोगों के समक्ष रखा वहाँ हमें समस्या नहीं आई। जहाँ कहीं गांव में सत्ता के दलाल मौजूद थे, वहाँ हमें बहुत परेशानी उठानी पड़ी थी।

समाज में बढ़ते अविश्वास के कारण, मिलकर साझे में काम करने की परम्परा बहुत कमजोर हुई है। परस्परावलम्बन कम होने से साझे काम भी समाज में कम हुए हैं। जलागम क्षेत्रों के विकास का काम परस्परावलम्बन का ही काम है। यह तो आपस में एक-दूसरे को जोड़ने वाला काम है। एक व्यक्ति की जमीन की ऊपरी सतह पर जो काम हुआ उसका अधिकतर लाभ तो उसे स्वयं को मिलेगा, लेकिन भूमिगत जो भू-पुनर्सिंचन का कार्य होता है, उसका लाभ पड़ोसी को जरूर मिलता है, अर्थात् यह काम एक दूसरे को लाभ देने के साथ-साथ पड़ोसीपन को बढ़ाने वाला है। पड़ोसी के भले का जो भाव हमारे समाज में था, उसे इस काम के जरिये पुनर्जीवित किया जा सकता है। अब ये भाव जहाँ नहीं हैं, वहाँ-वहाँ जलागम विकास कार्य करने में बहुत कठिनाई आई है।

गरीबी में जीने वाला किसान ही प्रायः इस प्रकार के कार्य करने हेतु आगे आता है। उसके पास साधन नहीं होते। यदि वह पूरा श्रम इन कार्यों में लगाता है तो उसके सामने रोटी की समस्या आ जाती है। कभी-कभी कर्ज लेना पड़ता है। पड़ोसी को इसके काम से सीधा लाभ होने वाला है। फिर भी कुछ गांवों में तो जिस पड़ोसी को सीधा लाभ होता है उसने ही दूसरे गरीब के काम में बाधा पैदा कर दी। क्योंकि सक्षम किसान इस आशा में था कि जब इस जमीन में बिलकुल पैदावार नहीं होगी तो वह इस जमीन को हमें ही कम दाम में बेच देगा। ऐसे में स्वैच्छिक संस्था की भूमिका अति महत्त्वपूर्ण हो जाती है। तरुण भारत संघ ने ऐसी स्थिति पर अधिक ध्यान दिया है। गरीब किसानों के लिए तरुण भारत संघ कुछ समय के लिए वैसाखी बन जाता है। देखने में आया है कि कहीं-कहीं बैशाखी बनने से गरीब ने अपने आप चलना शुरू कर दिया, जो तरुण भारत संघ को अच्छा लगता है। लेकिन जहाँ कुछ लोग वैसाखी का सहारा लेकर जीवन भर उसी के सहारे चलते रहते हैं वे वैशाखियों के लिए भी कष्टप्रद हो जाते हैं। फिर वैसाखी तो कभी न कभी टूट सकती है। ऐसे में जिस समुदाय को एक बार वैशाखियों के सहारे चलने की आदत पड़ गई और वैसाखी टूट जाये तो उससे अधिक दुःखदायी स्थिति पैदा हो सकती है। इसलिए वैसाखी का स्थायी रूप से सहारा लेना ठीक नहीं है। यह बात समुदाय को अच्छी तरह समझ लेनी चाहिए।

इस प्रकार समय के अभाव में समाज का काम बिखर जाता है। बिखरे हुए समाज में जलागम विकास का काम करना असंभव है।

हमारे समुदाय को साझे के काम की भविष्य में होने वाली प्रबन्धकीय उपेक्षाओं का अभाव नहीं रहता। इसलिए परम्परागत शामिलाती जलागम विकास के काम की उपेक्षाएँ होने पर वे साधन अनुपयोगी

हो जाते हैं। फिर समाज के लिए उन्हें उपयोगी बनाना बड़ा मुश्किल काम होता है। शुरुआती दौर में तरुण भारत संघ को इन समस्याओं का बहुत सामना करना पड़ा था।

हमारे समाज ने जल संसाधनों को जिस प्रकार से बनाया और बढ़ाया था, उसमें समाज की अपनी जरूरतों को पूरा करने के लिए सभी वर्गों की भागीदारी बराबरी की थी। यह भागीदारी प्रेम एवं लगाव, निष्ठा से जुड़ी हुई थी। इसलिए हमारी परम्परागत व्यवस्था में निर्माता एवं उपयोगकर्ता में कोई दूरी और भेदभाव नहीं था। बाद में इसे जातीय भेदभाव के रूप में विकसित होने का मौका मिला। निर्माण करने वाला और श्रम करके उपयोग करने वाला अलग-अलग जातियों में बंटने लगा।

गांव में तालाब बनाने का काम गांव की आम सहमति से गांव के साहूकार से लेकर क्षत्रिय, ब्राह्मण, नाई, कुम्हार, चमार, मीणा, गुर्जर ये सब अपनी क्षमताओं के मुताबिक इसके बनने में सहयोग करते। गजधर आकर इस काम को करने का तरीका बताता और सब लोग इस तरह के काम में जुट जाते। तालाब के नामकरण से लेकर इसका उपयोग करने के कायदे-कानून भी सभी मिलकर बनाते।

बाद के दौर में इन संसाधनों की मालिकी व नियन्त्रण को लेकर कुछ जातीय विचार शुरू हुए। फिर जातीय आधार पर जल के संसाधनों के बंटवारे शुरू हो गये। यह हमारे समाज की टूटन व बिखराव की प्रक्रिया की शुरुआत थी और तभी से हमारा समाज जल जैसे अत्यन्त जरूरी साधन के लिए भी गुलाम होता चला गया। यह गुलामी का दौर वैसे तो पुराना है लेकिन 100 वर्ष से ज्यादा तेज हुआ है। जैसे-जैसे अंग्रेजीयत फैलती गई हमें अपना पानी भी अंग्रेजी पैकिंग में लेने की आदत सी हो गयी।

हमारी यह गुलामी की आदत और कुछ वर्ष इसी प्रकार बढ़ेगी! तब तक जलागम विकास के काम को करने में थोड़ी कठिनाई रहेगी। जब यह गुलामी चरम सीमा पर पहुँच जायेगी और पूरे समाज में जल का संकट गहरायेगा तब यह समाज अपने जल संसाधन को पुनर्जीवित करने में जुटेगा। लेकिन थानागाजी व राजगढ़ की तहसीलों में तरुण भारत संघ का अनुभव यह है कि अभी भी बहुत सारे गांव अपने पानी की व्यवस्था अपने हाथों से करने के लिए तत्पर हैं और कर भी रहे हैं। सैकड़ों गांव ऐसे हैं, जहाँ आज की विपरीत स्थिति में भी ग्रामीण समाज अपने जल का प्रबन्ध स्वयं कर रहा है। दुहारमाला, क्रासका, देवरी, नांगल, लोठावास तथा भॉवता जैसे अनेको गांवों ने पहले तो पानी का संकट होने के कारण तरुण भारत संघ को अपनी वैसाखी बनाकर अपने पानी की व्यवस्था कर ली और अब बिना वैसाखी के अपने जल साधनों की देख-रेख, सुरक्षा व संवर्द्धन का कार्य स्वयं अपने हाथों से कर रहे हैं। लेकिन ऐसी स्थिति के बावजूद भी ऐसा नहीं है कि इन गांवों में सभी देवता ही हैं। कुछ लोग तो यह अच्छा काम हो जाने के बाद भी इस तरह के कामों को और आगे बढ़ाने से जी चुराते रहते हैं और ये ऐसे लोग हैं, जिनकी श्रम के प्रति निष्ठा नहीं है। वे बिना काम किये खाने वाले लोग ही हैं जो इस तरह के साझे व शामिलाती काम में रोड़ा बनते हैं। वे अंग्रेजीयत से प्रभावित लोग आज भी गांव-गांव में इस तरह के कार्यों में बाधक हैं।

आज गांव में प्रकृति से प्रेम करने वाले, पेड़ों, जानवरों व पक्षियों से बात करने वाले लोग बिलकुल समाप्त नहीं हुए हैं। शायद इनकी बदौलत भारत आज भी टिका हुआ है। यहाँ दुनिया के दूसरे देशों के मुकाबले प्रकृति के साथ हिंसा बहुत कम है। हर गांव में इस हिंसा से बचाव करने वाले लोग आज भी मौजूद हैं। लेकिन गांव में सत्ता की दलाली करने वालों के साथ इनका खास संवाद नहीं होता और यदि संवाद होता है तो ये गांव के ऐसे लोगों को अन्धविश्वासी एवं रूढिवादी कहकर अकेला बना देते हैं।

इसलिए आज गांव में भी प्रकृति संरक्षण व संवर्द्धन के जो प्रयास होते हैं, सत्ता की दलाली करने वाले वर्ग का उनसे भी अर्थ लाभ कमाना एकमात्र लक्ष्य रहता है। इस कारण ये जलागम विकास के कार्यों में गांव के लिए श्रमदान व सहयोग के अन्य काम नहीं होने देते, क्योंकि यदि गांव वाले इस प्रकार के कार्य में श्रमदान करेंगे तो इन सत्ता के दलालों को अर्थ लाभ नहीं होगा। गांव में यह विभाजन जलागम विकास के कार्यों में सबसे बड़ी बाधा है। यह तरुण भारत संघ का प्रत्यक्ष अनुभव रहा है। जिस गांव में भी सत्ता के दलाल मौजूद हैं, उस गांव में तो मजबूत संगठन तक बनने नहीं दिया गया। यदि कहीं संगठन बन भी गया तो भी जलागम विकास का काम नहीं हो सका।

निष्कर्ष के रूप में यह बात कही जा सकती है कि जलागम विकास के कार्य सामाजिक विग्रह को दूर किये बिना सम्भव नहीं हैं। आज हमारा समाज जिस प्रकार बंटा हुआ है, उसके चलते सफल जलागम विकास करना संभव नहीं है। समाज को संगठित करके ही प्रकृति पर आये आज के संकट को दूर किया जा सकता है। प्रकृति के साथ हिंसा करने वाले लोगों को रोकने के लिए प्रकृति-प्रेमियों के बीच आपस में गहरा संवाद होना चाहिए। इसके बाद संगठित प्रयासों से ही प्रकृति के विरुद्ध होने वाली हिंसा रोकी जा सकती है।

□□

जठे-जठे जळ है वठे, जीवण री मुसकान।
बिन अनजळ मिटता दिख्या, सांसा रा सैंनाण।।

पाणी सूं मूंघो नहीं, सूंघो और न कोय।
बिन पाणी जाणी नहीं, जीवन-रचना होय।।

पाणी सूं फसलां पकै, फळ-फूलां रो ढेर।
पाणी जद रुठै परो, तो धरती अन्धेर।।

पाणी सूं रितवां बणै, पाणी तीज-तिंवार।
पाणी सूं आभौ हंसे, धरा करे सिणगार।।

भांत-भांत री वनसपति, जीव-जन्तु चौफेर।
पाणी रै परताप सूं, दीसै सांझ सबेर।।

पाणी सूं ही पनपिया, रहण-सहण रा ढंग।
पाणी सूं प्यारा लगे, इन्द्रधनुष रा रंग।।

पाणी सूं परळै मचै, बिन पाणी दुसकाळ।
पाणी रै परकोप री, कर तू सार-संभाळ।।

बांधे चतुर सुजाण नित, पाणी पेला पाळ।
पाणी गुजर्‌या सीस पर, कदै ढब्यो है काळ?

पाणी जद पागल बण्यो, नर ही नाखी नाथ।
राजा भागीरथ तप्यो, लायो गंगा साथ।।

पाणी सूं मरु मुळकियो, महिमा बढ़ी अपार।
कण-कण सोनो निपजियो, खूब भर्‌या भंडार।।

आभै सूं इमरत झरै, हरण धरा री पीर।
दाग लगावे क्यूं भला, क्यूं व्हे दावणगीर।।

पाणी रै उजळास में, मती मैल तू घोळ।
मूंघी पड़सी बावळा, जिन्दगाणी सूं रोळ।।

जे पाणी विष बण गयो, हरसी सबरा प्राण।
रक्षक जद भक्षक बणे, मिले कठां सूं त्राण?

पाणी घणो अमोल है, मती अकारथ ढोळ।
बूंद-बूंद कारज सरै, ऐसो मारग खोल।।

काळा मेघ न देखिया, धोळा कीधा केस।
एक बार तो बरस जा, इन्दर म्हारै देस।।

पाणी सूं दोआब है, पाणी सूं पंजाब।
बिन पाणी रा थार नै, ढाब सके तो ढाब।।

मोती रो तो मोल ही, पाणी री पहचाण।
बिन पाणी मोती रुळै, भाटा संग समान।।

आब रही तो आबरु, रहसी आपूं आप।
आब गई तो सब गयो, आब मिनख रो माप।।

– भगवती लाल व्यास